भा० दि० जैनसंघ-ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमालाका उद्देश्य

प्राकृत संस्कृत आदि भाषाओंमें निबद्ध दि० जैनागम,
दर्शन, साहित्य, पुराण आदिको यथासम्भव
हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित करना

सञ्चालक

भा० दि० जैनसंघ

ग्रन्थाङ्क १-७

प्राप्तिस्थान
मैनेजर
भा० दि० जैनसंघ
चौरासी, मथुरा

मुद्रक—पं० शिवनारायण उपाध्याय बी० ए०
नया संसार प्रेस भदैनी वाराणसी।

स्वाध्याय] प्रति ८०० [वी० नि० सं० २४८८

Sri Dig Jain Sangha Granthamala No 1-VII

KASAYA-PAHUDAM
VII
PRADESHAVIBHAKTI

BY

GUNADHARACHARYA

WITH

CHURNI SUTRA OF YATIVRASHABHACHARYA

AND

THE JAYADHAVALA COMMENTARY OF

VIRASENACHARYA THERE-UPON

EDITED BY

Pandit Phulachandra Siddhantashastri

EDITOR MAHABANDHA

JOINT EDITOR DHAVALA.

Pandit Kailashachandra Siddhantashastri

Nyayatirtha Siddhantaratna,

Pradhanadhyapak Syadvada Digambara Jain

Vidyalaya Varanasi

PUBLISHED BY

THE SECRETARY PUBLICATION DEPARTMENT

THE ALL-INDIA DIGAMBAR JAIN SANGHA

CHAURASI, MATHURA

VIRA SAMVAT 2485 VIKRAMA S 2015 1958 A C

विषय-परिचय

पूर्वमें प्रकृतिविभक्ति स्थितिविभक्ति और अनुभागविभक्तिका विचार कर आये हैं। प्रकृतमें प्रदेशविभक्तिका विचार करना है। कर्मोंका बन्ध होने पर तत्काल बन्धको प्राप्त होनेवाले ज्ञानावरणादि आठ या सात कर्मोंको जो द्रव्य मिलता है उसकी प्रदेश संज्ञा है। यह दो प्रकारका है—एक मात्र बन्धके समय प्राप्त होनेवाला द्रव्य और दूसरा बन्ध होकर सत्तामें स्थित द्रव्य। केवल बन्धके समय प्राप्त होनेवाले द्रव्यका विचार महाबन्धमें किया है। यहाँ वर्तमान बन्धके साथ सत्तामें स्थित जितना द्रव्य होता है उस सबका विचार किया गया है। उसमें भी ज्ञानावरणादि सब कर्मोंकी अपेक्षा विचार न कर यहाँ पर मात्र मोहनीयकर्मकी अपेक्षा विचार किया गया है। मोहनीयकर्मके कुल भेद अट्ठाईस हैं। सर्व प्रथम इन भेदोंका आश्रय लिये बिना और बादमें इन भेदोंका आश्रय लेकर प्रस्तुत अधिकार में विविध अनुयोगद्वारोंके आश्रयसे प्रदेशविभक्तिका साङ्गोपाङ्ग विचार किया गया है। यहाँ पर जिन अनुयोगद्वारोंके आश्रयसे विचार किया गया है वे अनुयोगद्वार ये हैं—भागाभाग, सर्वप्रदेशविभक्ति, नोसर्वप्रदेशविभक्ति, उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति, अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति, जघन्य प्रदेशविभक्ति, अजघन्य प्रदेशविभक्ति, सादिप्रदेशविभक्ति, अनादिप्रदेशविभक्ति, ध्रुवप्रदेशविभक्ति, अध्रुवप्रदेशविभक्ति, एक जीवकी अपेक्षा स्वामित्व, काल, अन्तर, नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय, परिमाण, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव और अल्पबहुत्व। मात्र उत्तरप्रदेशविभक्तिका विचार करते समय सन्निकर्ष नामक एक अनुयोगद्वार और अधिक हो जाता है। कारण स्पष्ट है।

भागाभाग—इस अनुयोगद्वारमें उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य इन चार पदोंका आश्रयकर एक बार जीवोंकी अपेक्षा और दूसरी बार सत्तामें स्थित कर्म परमाणुओंकी अपेक्षा कौन कितने भागप्रमाण हैं इसका विचार किया गया है, इसलिए इस दृष्टिसे भागाभाग दो प्रकारका है—जीवभागाभाग और प्रदेशभागाभाग। जीवभागाभागका विचार करते हुए बतलाया है कि उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके अनन्तवें भागप्रमाण हैं और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके अनन्त बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंके विषयमें जानना चाहिए। यह ओघ प्ररूपणा है। आदेशसे सब मार्गणाओंमें अपनी-अपनी संख्याको जानकर यह भागाभाग समझ लेना चाहिए। प्रदेश भागाभागका विचार करते हुए सर्व प्रथम तो सामान्यसे मोहनीय कर्मकी अपेक्षा प्रदेशभागाभागका निषेध किया है, क्योंकि अवान्तर भेदोंकी विवक्षा किये बिना मोहनीय कर्म एक है, इसलिए उसमें भागाभाग घटित नहीं होता। इसके बाद ज्ञानावरणादि आठ कर्मोंकी अपेक्षा सामान्यसे मोहनीय कर्मको कितना द्रव्य मिलता है इसका विचार करते हुए बतलाया गया है कि आठों कर्मोंका जो समुदायरूप द्रव्य है उसमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे उस द्रव्यमेंसे अलग करके बचे हुए शेष बहुभागप्रमाण द्रव्यके आठ पुञ्ज करके आठों कर्मोंमें अलग-अलग विभक्त करदे। इसके बाद जो एक भाग बचा है उसमें पुनः आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देनेपर जो एक भाग लब्ध आवे उसे अलग करके शेष बहुभागप्रमाण द्रव्य वेदनीयको दे दे। पुनः बचे हुए एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जो बहुभागप्रमाण द्रव्य शेष रहे उसे मोहनीयको दे दे। लब्ध द्रव्यमें पुनः आवलिके

असख्यातवें भागका भाग देने पर जो बहुभाग शेष रहे वह समान रूपसे ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय इन तीन कर्मोंमे बाँट दे। लब्ध द्रव्यमें पुनः आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देने पर बहुभागप्रमाण बचे हुए द्रव्यको नाम और गोत्र इन दो कर्मों में बाँट दे। तथा अन्तमें लब्ध रूपमें जो एक भाग बचता है वह आयु कर्मको दे दे। इस प्रकार विभाग करनेपर मोहनीय कर्मको प्राप्त हुआ द्रव्य आ जाता है। मोहनीयकर्मको प्राप्त हुआ यह द्रव्य उत्कृष्ट और जघन्यके भेदसे दो प्रकारका होकर भी सब कर्मों की अपेक्षा पूर्वमें जो विभागका क्रम बतलाया है उसमें कोई बाधा नहीं आती। इस प्रकार ज्ञानावरणादि आठ कर्मों को जो द्रव्य मिलता है उसका अलग अलग विचार करनेपर आयु कर्मको सबसे स्तोक द्रव्य मिलता है। नाम और गोत्र कर्मका द्रव्य परस्परमें समान होकर भी आयुकर्मके द्रव्यसे विशेष अधिक होता है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तरायकर्मको मिलनेवाला द्रव्य परस्परमे समान होकर भी नाम और गोत्रकर्मको मिले हुए द्रव्यसे विशेष अधिक होता है। इससे मोहनीय कर्मका द्रव्य विशेष अधिक होता है और मोहनीयके द्रव्यसे वेदनीयकर्मका द्रव्य विशेष अधिक होता है। यह ओघप्ररूपणा है। सब मार्गणाओंमें इसे इसीप्रकार यथायोग्य घटित कर लेना चाहिए।

उत्तरप्रकृतियोंमें मोहनीय कर्मके सब द्रव्यका विभाग करते हुए पहले उसमें अनन्तका भाग दिलाकर एक भाग सर्वघाति द्रव्य और शेष बहुभाग देशघाति द्रव्य बतलाया गया है। देशघाति द्रव्यमें भी कषाय और नोकषाय रूपसे उसे बाँटा गया है। बादमें प्रत्येकका अपने अपने अवान्तर भेदोंमें बटवारा किया गया है। इसी प्रकार सर्वघाति द्रव्यको भी सर्वघाति प्रकृतियोंमें विभक्त करके बतलाया गया है। इस विषयकी विशेष जानकारीके लिए मूलमें देख लेना चाहिए। गति आदि मार्गणाओमे विचार करते समय नरकगतिमें जो विशेषता है उसका अलगसे निर्देश करके अन्यत्र भी जान लेने की सूचना की गई है। इस प्रसङ्गसे गतिसम्बन्धी जिन मार्गणाओंमें नरकगतिसे कुछ विशेषता है उसका निर्देश करके उत्कृष्ट भागाभाग प्ररूपणाको समाप्त किया गया है। जघन्य भागाभागका भी इसी प्रकार स्वतन्त्रतासे विचार करते हुए ओघ और आदेशसे उसका अलग अलग स्पष्टीकरण किया गया है। आदेशप्ररूपणा की अपेक्षा मात्र नरकगतिमें विशेष विचार करके गतिमार्गणाके जिन अवान्तर भेदोंमें नरकगतिके समान जघन्य भागाभाग सम्भव है उनका नाम निर्देश करके इस प्रकरणको समाप्त किया गया है।

सर्व-नोसर्वप्रदेशविभक्ति—सर्वप्रदेशविभक्तिमें सब प्रदेश और नोसर्वप्रदेशविभक्तिमें उनसे न्यून प्रदेश विवक्षित हैं। मूल और उत्तर प्रकृतियोंमें ये यथायोग्य ओघ और आदेशसे घटित कर लेने चाहिए।

उत्कृष्ट-अनुत्कृष्टप्रदेशविभक्ति—सबसे उत्कृष्ट प्रदेश उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति है और उनसे न्यून प्रदेश अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति है। मूल और उत्तर प्रकृतियोंके ओघ और आदेशसे जहाँ पर ये जितने सम्भव हों उन्हें उस प्रकारसे जान लेना चाहिए।

जघन्य-अजघन्यप्रदेशविभक्ति—सबसे कम प्रदेश जघन्य प्रदेशविभक्ति है और उनसे अधिक प्रदेश अजघन्य प्रदेशविभक्ति है। मूल और उत्तर प्रकृतियोंके ओघ और आदेशसे जहाँ पर ये जिसप्रकार प्रदेश सम्भव हों उन्हें उस प्रकारसे जान लेना चाहिए।

सादि-अनादि-ध्रुव-अध्रुवप्रदेशविभक्ति—सामान्यसे मोहनीयके क्षय होनेके अन्तिम समयमें जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है और इससे पूर्व सब अजघन्य प्रदेशविभक्ति है, अतः अजघन्य प्रदेशविभक्ति सादि विकल्पके विना अनादि, ध्रुव और अध्रुव यह तीन प्रकारकी

होती है। अब रहीं उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशविभक्तियाँ सो ये सादि और अध्रुव इस तरह दो प्रकार की ही होती हैं। जघन्य प्रदेशविभक्ति क्षपणाके अन्तिम समयमें होती है इसलिए वह सादि और अध्रुव है। तथा उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति कादाचित्क हैं, इसलिए ये भी सादि और अध्रुव हैं। यह ओघ प्ररूपणा है। आदेशसे सब गतियाँ परिवर्तनशील हैं, अतः उनमें उक्त सब प्रदेशविभक्तियाँ सादि और अध्रुव ही होती हैं। आगे अन्य मार्गणाओंमें भी इसी प्रकार विचार कर घटित कर लेना चाहिए। उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा मिथ्यात्व मध्यकी आठ कषाय और पुरुषवेदके बिना आठ नोकषाय इनकी जघन्य प्रदेशविभक्ति क्षपणाके अन्तिम समयमें प्राप्त होती है, अतः इनकी भी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशविभक्तियाँ सादि और अध्रुव तथा अजघन्य प्रदेशविभक्तियाँ अनादि, ध्रुव और अध्रुव होती हैं। पुरुषवेदके उदयसे क्षपकश्रेणि पर चढ़ा हुआ जो गुणितकर्मांशवाला जीव जब स्त्रीवेदकी अन्तिम फालिको पुरुषवेदमें संक्रमित करता है तब पुरुषवेदकी एक समयके लिए उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। वही जीव जब पुरुषवेद और छह नोकषायोंके द्रव्यको संज्वलन क्रोधमें संक्रमित करता है तब संज्वलन क्रोधकी एक समयके लिए उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। वही जीव जब संज्वलन क्रोधके द्रव्यको संज्वलनमानमें संक्रमित करता है तब संज्वलनमानकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। वही जीव जब संज्वलनमानके द्रव्यको संज्वलन मायामें संक्रमित करता है तब संज्वलन मायाकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। तथा वही जीव जब संज्वलन मायाके द्रव्यको संज्वलन लोभमें संक्रमित करता है तब संज्वलन लोभकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। तथा इनकी जघन्य प्रदेशविभक्ति अपनी अपनी क्षपणाके अन्तिम समयमें होती है। इस प्रकार इन पाँचोंकी उत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशविभक्ति एक समयके लिए होती है इसलिए ये सादि और अध्रुव हैं। तथा इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्ति अनादि ध्रुव और अध्रुव हैं। मात्र पुरुषवेदका जघन्य प्रदेशसत्कर्म क्षपितकर्मांश अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें होती है, इसलिए इसकी अजघन्य प्रदेशविभक्ति सादि भी बन जाती है। तथा इन पाँचोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति सादि अनादि ध्रुव और अध्रुव चारों प्रकारकी है। जब तक इनकी उत्कृष्टप्रदेशविभक्ति नहीं प्राप्त होती तब तक तो वह अनादि, ध्रुव और अध्रुव है और उत्कृष्टके बाद वह सादि है। सम्यक्त्व और सम्य *ग्मिथ्यात्व ये प्रकृतियाँ सादि और सान्त* हैं इसलिए इनके चारों ही पद सादि और अध्रुव हैं। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तियाँ कादाचित्क हैं जघन्य प्रदेशविभक्ति क्षपणाके अन्तिम समयमें होती है इसलिए ये तीनों सादि हैं। तथा क्षपणाके पूर्व इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्ति नियमसे होती है इसलिए तो वह अनादि है। तथा क्षपणाके बाद पुनः संयुक्त होने पर वह सादि है। ध्रुव और अध्रुव विकल्प तो यहाँ सम्भव हैं ही। इस प्रकार इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्ति चारों प्रकारकी प्राप्त होती है। यह ओघप्ररूपणा है। आदेशसे अचक्षुदर्शन और भव्यमार्गणामें ओघप्ररूपणा बन जाती है। मात्र भव्यमार्गणामें ध्रुव भङ्ग सम्भव नहीं है। शेष सब मार्गणाएँ परिवर्तनशील हैं अतः उनमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट आदि चारों विभक्तियाँ सादि और अध्रुव ही प्राप्त होती हैं।

स्वामित्व—सामान्यसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी ऐसा गुणितकर्मांशिक जीव होता है जो बादरपृथिवीकायिकोंमें और बादर त्रसोंमें परिभ्रमण करके अन्तमें दो बार सातवें नरकके नारकियोंमें उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्त कम पूरी आयु बिता चुका है। यहाँ उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी किस समय होता है इस सम्बन्धमें दो मत हैं। एक मतके अनुसार अन्तर्मुहूर्त नरकायु शेष रहनेपर उसके प्रथम समयमें होता है और दूसरे मतके अनुसार

नरकके अन्तिम समयमें होता है। मिथ्यात्व, बारह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेश विभक्तिका स्वामी इसी प्रकार जानना चाहिए। जो गुणितकर्मांशिक दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाला जीव जब मिथ्यात्वको सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रमित करता है तब वह सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी होता है। तथा जब वही जीव सम्यग्मिथ्यात्वको सम्यक्त्वमें संक्रमित करता है तब वह सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी होता है। नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी ऐसा गुणितकर्मांशिक जीव होता है जो अन्तमें ईशान कल्पमें उत्पन्न होकर उसके अन्तिम समयमें स्थित है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। मात्र इसे अन्तमें असंख्यात वर्षकी आयुवालोंमें उत्पन्न कराकर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा स्त्रीवेदका पूरण कराकर प्राप्त करना चाहिए। जो गुणितकर्मांशिक जीव क्रमसे नपुंसकवेद, स्त्रीवेद और पुरुषवेदको यथायोग्य पूरकर अन्तमें मनुष्योंमें उत्पन्न होकर शीघ्र ही कर्मोंका क्षय करता हुआ जब स्त्रीवेदको पुरुषवेदमें संक्रमित करता है तब पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी होता है। वही जीव जब पुरुषवेदको क्रोधसंज्वलनमें संक्रमित करता है तब क्रोधसंज्वलनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी होता है। वही जीव जब क्रोधसंज्वलनको मानसंज्वलनमें संक्रमित करता है तब मानसंज्वलनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी होता है। वही जीव जब मानसंज्वलनको मायासंज्वलनमें संक्रमित करता है तब मायासंज्वलनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी होता है और वही जीव जब मायासंज्वलनको लोभसंज्वलनमें संक्रमित करता है तब लोभसंज्वलनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी होता है। यह ओघसे उत्कृष्ट स्वामित्व है। ओघसे सामान्य मोहनीयकी जघन्य प्रदेश-विभक्तिका स्वामी क्षपितकर्मांशिक जीव क्षपणाके अन्तिम समयमें होता है। उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका स्वामी ऐसा क्षपितकर्मांशिक जीव होता है जो अन्तमें दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करते समय मिथ्यात्वकी दो समय कालवाली एक स्थितिको प्राप्त है। तथा वही जीव जब दर्शनमोहनीयकी क्षपणा किये विना मिथ्यात्वमें जाकर दीर्घ उद्वेलना कालके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करते हुए अपने अपने समयमें दो समय कालवाली एक स्थितिको प्राप्त होता है तब वह सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका स्वामी होता है। मध्यकी आठ कषायोंके विषयमें ऐसा क्षपितकर्मांशिक जीव लेना चाहिये जो अभव्योंके योग्य जघन्य प्रदेशविभक्ति करके त्रसोंमें उत्पन्न हुआ है और वहाँ आगमोक्त क्रिया व्यापार द्वारा उसे और भी कम करके अन्तमें क्षपणा कर रहा है। ऐसे जीवके जब इनकी दो समय कालवाली एक स्थिति शेष रहती है तब वह इनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका स्वामी होता है। वही जीव जब अनन्तानुबन्धीकी बार बार विसंयोजना कर लेता है और अन्तमें दो छ्यासठ सागर कालतक सम्यक्त्वका पालन करके पुनः उसकी विसंयोजना करता है तब वह अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी दो समय कालवाली एक स्थितिके रहते हुए उनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका स्वामी होता है। नपुंसकवेद और स्त्रीवेदका भी क्षपितकर्मांशिक जीव ही अपनी अपनी क्षपणाके अन्तिम समयमें उदयस्थितिके सद्भावमें जघन्य प्रदेशविभक्तिका स्वामी होता है। पुरुषवेदकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका स्वामी ऐसा क्षपक पुरुषवेदी होता है जो जघन्य घोलमान योगसे पुरुष-वेदका बन्ध करके उसका संक्रमण करते हुए अन्तिम समयमें स्थित है। इसी प्रकार संज्वलन क्रोध, मान और मायाकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका स्वामी घटित कर लेना चाहिये। लोभ संज्वलनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका स्वामी क्षपक अधःकरणके अन्तिम समयमें होता है। तथा छह नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका स्वामी भी ऐसा क्षपक होता है जो अन्तिम स्थिति काण्डकके संक्रमणके अन्तिम समयमें स्थित है। यह ओघसे जघन्य स्वामित्व है। आदेशसे

मूल और उत्तर प्रकृतियोंका उत्कृष्ट और जघन्य स्वामित्व चारों गतियोंकी अपेक्षासे तो मूलमें ही कहा है, इसलिए इसे वहाँसे जान लेना चाहिए। तथा अन्य मार्गणाओंमें उक्त स्वामित्वको देखकर घटित कर लेना चाहिए। यहाँ पर मूलमें जघन्य प्रदेशसत्कर्मसे लेकर उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म तक किस प्रकृतिके सान्तर और निरन्तर कितने स्थान किस प्रकार प्राप्त होते हैं यह सब कथन विस्तारके साथ किया है सो उसे वहाँ मूलमें ही देखकर समझ लेना चाहिये।

काल—सामान्यसे मोहनीयका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म तेतीस सागरकी आयुवाले नारकीके अन्तिम समयमें होता है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। इसकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति जो उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म करके एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ है उसके अनन्तकाल तक देखी जाती है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल अनन्तकाल है। किन्तु यदि परिणामोंकी मुख्यतासे देखा जाय तो अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल असंख्यात लोकप्रमाण ही प्राप्त होता है, क्योंकि सब प्रकारके प्रदेशसत्त्वके कारणभूत परिणाम ही असंख्यात लोकप्रमाण हैं। और जिसने सातवें नरकमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म करके यथाविधि मनुष्य पर्याय प्राप्त कर आठ वर्षकी अवस्थामें ही क्षपकश्रेणिपर आरोहणकर मोहनीयका नाश किया है उसकी अपेक्षासे देखा जाय तो अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल आठ वर्ष अधिक अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। मिथ्यात्व आदि अवान्तर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका यह काल इसी प्रकार जानना चाहिये। मात्र कुछ प्रकृतियोंके कालमें कुछ विशेषता है। यथा—अनन्तानुबन्धीकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति जो अन्तर्मुहूर्तके अन्तरसे दो बार विसंयोजना करता है उसके होती है, इसलिए इसका जघन्य काल मात्र अन्तर्मुहूर्त ही प्राप्त होता है। जैसा कि स्वामित्वमें बतला आये हैं चार संज्वलन और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति यथायोग्य क्षपकश्रेणिमें होती है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल अनादि-अनन्त अनादि-सान्त और सादि-सान्त यह तीन प्रकारका प्राप्त होता है। अनादि-अनन्त काल अभव्योंके होता है, अनादि-सान्त काल अपनी अपनी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके प्राप्त होनेके पूर्व तक भव्योंके होता है। और सादि-सान्त काल ऐसे जीवोंके होता है जिन्होंने उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति करके अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति की है। मात्र इस प्रकार जो अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति प्राप्त होती है वह अन्तर्मुहूर्त कालतक ही पाई जाती है, क्योंकि क्षपक हो जानेसे आगे इन प्रकृतियोंका सत्त्व नहीं पाया जाता, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व-का कमसे कम अन्तर्मुहूर्त कालतक और अधिकसे अधिक साधिक दो छयासठ सागर कालतक सत्त्व पाया जाता है इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागर कालप्रमाण है। सामान्यसे मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्ति सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयमें होती है, इसलिए इसकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका काल अनादि-अनन्त और अनादि-सान्त है। उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा मिथ्यात्व आदि अट्ठाईस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है जो अपने अपने जघन्य स्वामित्वके समय प्राप्त होती है। तथा मिथ्यात्व ग्यारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका काल अनादि-अनन्त और अनादि-सान्त है, क्योंकि अभव्योंके इसका सर्वदा सद्भाव पाया जाता है इसलिए तो अनादि-अनन्त विकल्प बन जाता है और भव्योंके अपने जघन्य स्वामित्वके पूर्व तक यह विभक्ति पाई जाती है इसलिए अनादि-सान्त विकल्प बन जाता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक

दो छ्यासठ सागरप्रमाण है सो इसका खुलासा अनुत्कृष्टके समान कर लेना चाहिये। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके तीन विकल्प होते हैं—अनादि-अनन्त, अनादि-सान्त और सादि-सान्त। इनमेंसे प्रारम्भके दो विकल्पोंका खुलासा सुगम ह। अब रहा सादि-सान्त विकल्प सो इसका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है, क्योंकि विसयोजनाके बाद इसकी सयोजना होनेपर इसका कमसे कम अन्तर्मुहूर्त कालतक और अधिकसे अधिक कुछकम अर्धपुद्गल परिवर्तन काल तक सत्त्व पाया जाता है। लोभसज्वलनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके भी उक्त तीन विकल्प जानने चाहिये। मात्र इसके सादि-सान्त विकल्पका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त ही प्राप्त होता है, क्योंकि जघन्य प्रदेशविभक्ति होनेके बाद इसका अन्तर्मुहूर्त कालतक ही सत्त्व देखा जाता है। कालकी अपेक्षा मूल और उत्तर प्रकृतियोंकी यह ओघ प्ररूपणा है। गति आदि मार्गणाओंमे अपनी अपनी विशेषताको जानकर कालका विचार इसी प्रकार कर लेना चाहिये।

अन्तर—एक बार मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होनेके बाद पुनः वह अनन्त काल बाद ही प्राप्त होती है, इसलिए सामान्यसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्तकाल है। अथवा परिणामोंकी मुख्यतासे इसका जघन्य अन्तरकाल असख्यात लोकप्रमाण भी बन जाता है। तथा उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है, इसलिए इसकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। इसी प्रकार मिथ्यात्व, मध्यकी आठ कपाय और पुरुपवेदके सिवा आठ नोकपायोंके विपयमें घटित कर लेना चाहिए। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अन्तरकालसम्बन्धी सब कथन उक्तप्रमाण ही है। पर विसयोजना प्रकृति होनेसे इसकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छ्यासठ सागरप्रमाण भी बन जाता है, इसलिए इतनी विशेपताका अलगसे निर्देश किया है। शेप सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति क्षपणाके समय होती है, इसलिए उनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं प्राप्त होता। मात्र सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये दोनों उद्वेलना प्रकृतियाँ है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्ध पुगद्‌ल परिवर्तनप्रमाण बन जानेसे वह उक्त कालप्रमाण है। तथा पुरुपवेद और चार सज्वलन इनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति एक समयके लिए होती है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है।

समान्यसे मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्ति दसवें गुणस्थानके अन्तिम समयमें प्राप्त होती है, इसलिए इसकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका निपेध किया है। इसी प्रकार मिथ्यात्व, ग्यारह कषाय और नौ नोकपायोंके विपयमें जान लेना चाहिए, क्योंकि इनकी क्षपणाके अन्तिम समयमें ही जघन्य प्रदेशविभक्ति प्राप्त होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये उद्वेलना प्रकृतियाँ हैं, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण बन जानेसे वह उक्त प्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्क विसयोजना प्रकृतियाँ हैं, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छ्यासठ सागर बन जानेसे वह उक्त प्रमाण है। लोभसज्वलन की जघन्य प्रदेशविभक्ति एक समयमात्र होकर भी अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है, इसलिए इसकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। तथा सम्यक्त्वादि इन सब प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति क्षपणाके समय ही होती है, इसलिए

इसके अन्तरकालका निर्देश किया है। यह ओघप्ररूपणा है। आदेशसे गति आदि मार्गणाओंमें यह अन्तरकाल अपनी अपनी विशेषताको समझ कर घटित कर लेना चाहिए।

नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय—यह प्ररूपणा भी जघन्य और उत्कृष्टके भेदसे दो प्रकारकी है। नियम यह है कि जो उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव हैं वे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति वाले नहीं होते और जो अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव हैं वे उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले नहीं होते। यह अर्थपद है। इसके अनुसार यहाँ ओघसे और चारों गतियोंकी अपेक्षा मूल और उत्तर प्रकृतियोंका आलम्बन लेकर भङ्गविचयका विचार करते हुए ये तीन भङ्ग निश्चित किये गये हैं—१ कदाचित् सब जीव उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले नहीं हैं, २ कदाचित् नाना जीव उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले नहीं हैं और एक जीव उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला है तथा कदाचित् नाना जीव उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले नहीं हैं और नाना जीव उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा भी इसी प्रकार तीन भङ्ग कहने चाहिए। किन्तु इन भङ्गोंको कहते समय जहाँ निषेध किया है वहाँ विधि करनी चाहिए और जहाँ विधि की है वहाँ निषेध करना चाहिए। ये भङ्ग ओघसे तो बन ही जाते हैं। साथ ही चारों गतियोंमें भी बन जाते हैं। मात्र लब्ध्यपर्याप्तमनुष्य यह सान्तर मार्गणा है, इसलिए इसमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्टप्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा प्रत्येकके आठ आठ भङ्ग होते हैं। जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा भी पूर्वोक्त प्रकारसे सब कथन कर लेना चाहिए। मात्र उत्कृष्ट और अनुत्कृष्टके स्थानमें जघन्य और अजघन्य पदकी योजना करनी चाहिए।

भागाभाग—इस अनुयोगद्वारमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट तथा जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा कौन किसके कितने भागप्रमाण हैं इसका विचार किया गया है। सामान्यसे सब जीव अनन्त हैं। उनमेंसे अधिकसे अधिक असंख्यात जीव एक साथ उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका बन्ध कर सकते हैं इसलिए छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके अनन्तवें भागप्रमाण और शेष अनन्त बहुभागप्रमाण जीव अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले होते हैं। मात्र सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तावाले जीव अधिकसे अधिक असंख्यात ही होते हैं। इसलिए इनकी अपेक्षा असंख्यातवें भागप्रमाण उत्कृष्ट विभक्तिवाले जीव और असंख्यात बहुभागप्रमाण अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले जीव होते हैं। सामान्य तिर्यञ्चोंमें यह प्ररूपणा अविकल बन जाती है इसलिए उनमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र गतिसम्बन्धी शेष अवान्तर भेदोंमें अपने अपने संख्याप्रमाणको दृष्टिमें रख कर इसका विवेचन करना चाहिए। जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा भागाभागका विचार उत्कृष्टके समान ही है यह स्पष्ट ही है इसलिए इसकी अपेक्षा पृथक् विवेचन न करके उत्कृष्टके समान जाननेकी सूचना की है। इतना विशेष है कि सामान्य मोहनीयकर्मकी अपेक्षा भागाभागका विचार नहीं किया है वहाँ इतना विशेष जानना चाहिए।

परिमाण—इस अनुयोगद्वारमें उत्कृष्ट आदि चारों प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंके परिमाणका निर्देश किया गया है। सामान्यसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति गुणितकर्मांशिक जीवोंके पर्याप्त होती है और ऐसे जीव असंख्यात होते हैं इसलिए मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका परिमाण असंख्यात है। इसके सिवा शेष सब संसारी जीवोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है, इसलिए उनका परिमाण अनन्त है। मिथ्यात्व, बारह कषाय और आठ नोकषायोंकी अपेक्षा यह परिमाण इसी प्रकार बन जाता है, इसलिए इनकी उत्कृष्ट और

अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका परिमाण भी उक्त प्रकारसे जान लेना चाहिए। पर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके समय तथा चार संज्वलन और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति क्षपणाके पूर्व यथास्थान प्राप्त होती है, इसलिए इनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका परिमाण संख्यात और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका परिमाण सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा असंख्यात तथा शेषकी अपेक्षा अनन्त होता है। यह ओघप्ररूपणा है। गतिमार्गणाके अवान्तर भेदोंमें स्वामित्वके अनुसार अपनी अपनी विशेषताको जानकर इसे घटित कर लेना चाहिए। जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा विचार करने पर सब प्रकृतियोंके जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका परिमाण संख्यात और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका परिमाण सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा असंख्यात तथा शेषकी अपेक्षा अनन्त प्राप्त होता है। कारणका विचार स्वामित्वको देख कर लेना चाहिए। गतिमार्गणा आदिके अन्य भेदोंमें भी स्वामित्वका विचार कर सामान्यसे मोहनीय और सब प्रकृतियोंकी अपेक्षा यह परिमाण जान लेना चाहिए। विशेष विचार मूलमें किया ही है।

क्षेत्र—मोहनीयकी उत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। मोहनीयकी उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा भी यह क्षेत्र इसी प्रकार जानना चाहिए। मात्र सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा कुछ विशेषता है। बात यह है कि इन प्रकृतियोंकी सत्तावाले कुल जीव ही असंख्यात हैं, इसलिए इनके चारों पदवाले जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है। यह ओघ प्ररूपणा है। गति आदि अन्य मार्गणाओंमें अपनी अपनी विशेषता जानकर क्षेत्रका विचार कर लेना चाहिए।

स्पर्शन—सामान्यसे मोहनीय और छब्बीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा अनुत्कृष्ट और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा शेष पदवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सर्वलोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। कारणका विचार स्वामित्वको देखकर कर लेना चाहिए। यह ओघप्ररूपणा है। गति आदि अन्य मार्गणाओंमें अपनी अपनी विशेषताको समझकर यह स्पर्शन घटित कर लेना चाहिए।

नाना जीवोंकी अपेक्षा काल—सामान्यसे मोहनीयकी तथा मिथ्यात्व, बारह कषाय और आठ नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति यदि नाना जीव युगपत् करें तो एक समय तक करते हैं और निरन्तर करें तो आवलिके असंख्यातवें भागप्रमामण काल तक करते रहते हैं, इसलिए इनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। तथा इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका काल सर्वदा है यह स्पष्ट ही है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, चार संज्वलन और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति एक साथ या लगातार करनेवाले जीव संख्यातसे अधिक नहीं होते, इसलिए इनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय प्राप्त होता है। तथा इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका काल सर्वदा है, क्योंकि इनकी सत्तावाले जीवोंका सर्वदा सद्भाव बना रहता है। यह ओघसे उत्कृष्ट प्ररूपणा है। जघन्य

प्ररूपणाकी अपेक्षा विचार करनेपर सामान्यसे मोहनीय और सभी उत्तर प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय तथा अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका काल सर्वदा है। कालका विचार सर्वत्र कर लेना चाहिए। यह ओघसे जघन्य प्ररूपणा है। आदेशसे सब मार्गणाओंमें सब प्रकृतियोंकी चारों विभक्तिवाले जीवोंका काल अपनी अपनी विशेषताको ध्यानमें रखकर जान लेना चाहिए।

नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर—सामान्यसे मोहनीय तथा उत्तर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशविभक्ति यदि कोई जीव न करे तो कमसे कम एक समयका और अधिकसे अधिक अनन्त कालका अन्तर पड़ता है इसलिए इन सबकी उत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल प्राप्त होता है। तथा इन सबकी अनुत्कृष्ट और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीव सर्वदा पाये जाते हैं इसलिए इनकी अपेक्षा अन्तरकालका निषेध किया है। यह ओघ प्ररूपणा है। अन्य मार्गणाओंमें अपनी अपनी विशेषताको जानकर यह अन्तरकाल घटित कर लेना चाहिए।

सन्निकर्ष—सामान्यसे मोहनीय कर्म एक है इसलिए उसमें सन्निकर्ष घटित नहीं होता। उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा यह अवश्य ही सम्भव है। इस अनुयोगद्वारमें यह बतलाया गया है कि मिथ्यात्व आदि प्रकृतियोंमेंसे एक एक प्रकृतिके उत्कृष्ट या जघन्य प्रदेशसत्कर्मके रहते हुए अन्य प्रकृतियोंमेंसे किन प्रकृतियोंकी सत्ता पाई जाती है और किन प्रकृतियोंकी सत्ता नहीं पाई जाती। तथा जिन प्रकृतियोंकी सत्ता पाई जाती है उनका प्रदेशसत्कर्म अपने अपने उत्कृष्ट या जघन्यकी अपेक्षा किस मात्रामें लिए हुए होता है। इस प्रकार ओघ और आदेशसे निरूपण कर यह प्रकरण समाप्त किया गया है।

भाव—सब कर्मोंका बन्ध औदयिक भावकी मुख्यतासे होता है और तभी जाकर उनकी सत्ता पाई जाती है। यही कारण है कि यहाँ पर सामान्यसे मोहनीय कर्म और उसकी उत्तर प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवोंके औदयिक भाव जानना चाहिए।

अल्पबहुत्व—मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं क्योंकि वे एक साथ असंख्यातसे अधिक नहीं हो सकते। तथा उनसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं, क्योंकि अन्य सब संसारी जीवोंके दसवें गुणस्थान तक मोहनीय कर्मकी सत्ता पाई जाती है। इसी प्रकार मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं क्योंकि एक साथ एक कालमें वे संख्यातसे अधिक नहीं हो सकते। तथा उनसे अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं, क्योंकि अन्य सब संसारी जीवोंके दसवें गुणस्थान तक मोहनीयकर्मकी सत्ता पाई जाती है। यह ओघ प्ररूपणा है। अन्य मार्गणाओंमें अपनी अपनी विशेषताको ध्यानमें रखकर यह अल्पबहुत्व घटित कर लेना चाहिए। यह सामान्यसे मोहनीय कर्मकी अपेक्षा अल्पबहुत्वका विचार है। उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा भी इसे मूलको देखकर जान लेना चाहिए, क्योंकि मूलमें इसका स्पष्टरूपसे विस्तारके साथ विचार किया है।

भुजगारविभक्ति—भुजगारविभक्तिमें भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य इन चार पदोंका अवलम्बन लेकर समुत्कीर्तना, स्वामित्व, एक जीवकी अपेक्षा काल, एक जीवकी अपेक्षा अन्तर, नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय, भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव और अल्पबहुत्व इन तेरह अधिकारोंके द्वारा मूल और उत्तर प्रकृतियोंके प्रदेशसत्कर्मका साङ्गोपाङ्ग विचार किया गया है।

पदनिक्षेप—भुजगारविशेषको पदनिक्षेप कहते हैं। इस अधिकारमें उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि, जघन्य वृद्धि और जघन्य हानि तथा अवस्थितपद इन सबका आश्रय लेकर समुत्कीर्तना, स्वामित्व और अल्पबहुत्व इन तीन अधिकारोंके द्वारा मूल और उत्तरप्रकृतियोंके प्रदेशसत्कर्मका विचार किया गया है।

वृद्धि—पदनिक्षेपविशेषको वृद्धि कहते हैं। इस अधिकारमे यथासम्भव वृद्धि और हानिके अवान्तर भेदों तथा यथासम्भव अवक्तव्यविभक्ति और अवस्थितविभक्तिका आश्रय लेकर समुत्कीर्तना, स्वामित्व, एक जीवकी अपेक्षा काल, एक जीवकी अपेक्षा अन्तर, नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय, भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव और अल्पबहुत्व इन तेरह अधिकारोंके द्वारा मूल और उत्तर प्रकृतियोके प्रदेशसत्कर्मका विचार किया गया है।

सत्कर्मस्थान—मूल और उत्तर प्रकृतियोंके प्रदेशसत्कर्मस्थान कितने हैं इसका निर्देश करते हुए मूलमें बतलाया है कि उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका जिस प्रकार कथन किया है उसी प्रकार प्रदेशसत्कर्मस्थानोंका भी कथन कर लेना चाहिये। फिर भी विशेषताका निर्देश करते हुए प्रकृतमे प्ररूपणा, प्रमाण और अल्पबहुत्व ये तीन अधिकार उपयोगी बतलाये हैं।

झीनाझीनचूलिका

पहले उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका विस्तारके साथ विचार करते समय यह बतला आये हैं कि जो गुणितकर्मांशिक जीव उत्कर्पण द्वारा अधिकसे अधिक प्रदेशोंका सञ्चय करता है उसके उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है और जो क्षपितकर्मांशिक जीव अपकर्पण द्वारा कर्मप्रदेशोंको कमसे कम कर देता है उसके जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है, इसलिए यहाँपर यह प्रश्न उठता है कि क्या सब कर्मपरमाणुओंका उत्कर्पण या अपकर्षण होना सम्भव है, बस इसी प्रश्नका समाधान करनेके लिए यह झीनाझीन नामक चूलिका अधिकार अलगसे कहा गया है। साथ ही इसमें सक्रमण और उदयकी अपेक्षा भी इसका विचार किया गया है। इस सबका विचार यहाँपर चार अधिकारोंका आश्रय लेकर किया गया है। वे अधिकार ये हैं— समुत्कीर्तना, प्ररूपणा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व।

समुत्कीर्तना—इस अधिकारमें अपकर्षण, उत्कर्षण, सक्रमण और उदयसे झीन और अझीन स्थितिवाले कर्मपरमाणुओंके अस्तित्वकी सूचना मात्र दी गई है। प्रकृतमें झीन शब्दका अर्थ रहित और अझीन शब्दका अर्थ सहित है। तदनुसार जिन कर्मपरमाणुओंका अपकर्षण, उत्कर्षण, संक्रमण और उदय होना सम्भव नहीं है वे अपकर्ष, उत्कर्षण, संक्रमण और उदयसे झीन स्थितिवाले कर्मपरमाणु माने गये हैं। और जिन कर्मपरमाणुओं के ये अपकर्पण आदि सम्भव हैं वे इनसे अझीन स्थितिवाले कर्मपरमाणु माने गये हैं।

प्ररूपणा—इस अधिकारमें अपकर्षण आदिसे झीन और अझीन स्थितिवाले कर्मपरमाणु कौन हैं इसका विस्तारके साथ विचार किया गया है। उसमें भी सर्वप्रथम अपकर्पणकी अपेक्षा विचार करते हुए बतलाया गया है कि उदयावलिके भीतर स्थित जितने कर्मपरमाणु हैं वे सब अपकर्षणसे झीनस्थितिवाले और शेष सब कर्मपरमाणु अपकर्षणसे अझीन स्थितिवाले हैं। तात्पर्य यह है कि उदयावलिके भीतर स्थित कर्मपरमाणुओंका अपकर्षण न होकर वे क्रमसे यथावस्थित रहते हुए निर्जराको प्राप्त होते हैं, इसलिए वे अपकर्पणके अयोग्य होनेके कारण अपकर्पणसे झीन

स्थितिवाले माने गये हैं। किन्तु इनके सिवा शेष जितने कर्मनिषेक हैं उनके कर्मपरमाणुओंका अपकर्षण हो सकता है, इसलिए वे इसके योग्य होनेके कारण अपकर्षणसे अझीन स्थितिवाले माने गये हैं। यहाँपर इतना विशेष समझना चाहिए कि उदयावलिसे ऊपर प्रत्येक निषेकमें ऐसे बहुतसे कर्मपरमाणु होते हैं जो निकाचितरूप होते हैं अतः उनका भी अपकर्षण नहीं होता। पर वे सर्वथा अपकर्षणके अयोग्य नहीं होते क्योंकि दर्शनमोहनीय और अनन्तानुबन्धीसम्बन्धी ऐसे परमाणुओंका अनिवृत्तिकरणमें प्रवेश करनेपर और चारित्रमोहनीयसम्बन्धी ऐसे परमाणुओंका अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें प्रवेश करनेपर निधत्ति और निकाचनाकरणकी व्युच्छित्ति हो जानेसे अपकर्षण होने लगता है, इसलिए प्रकृतमें ये कर्मपरमाणु भी अपकर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं इसका निर्देश नहीं किया है, क्योंकि अवस्थाविशेषमें इनमें अपकर्षणकी योग्यता मान ली गई है। परन्तु उदयावलिके भीतर स्थित जितने कर्मपरमाणु होते हैं उनमें त्रिकालमें भी ऐसी योग्यता नहीं पाई जाती है अतः प्रकृतमें मात्र उदयावलिके भीतर स्थित कर्मपरमाणुओंको ही अपकर्षणसे झीन स्थितिवाला बतलाया गया है। सासादन गुणस्थानमें दर्शनमोहनीयका अपकर्षण नहीं होता इसलिए यहाँपर भी यही समाधान समझ लेना चाहिए।

उत्कर्षणकी अपेक्षा झीन और अझीन स्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका निर्देश करते हुए जो कुछ कहा गया है उसका भाव यह है कि उदयावलिके भीतर स्थित कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण नहीं होता। उदयावलिके बाहर यदि विवक्षित कर्मका बन्ध हो रहा हो तो ही उसके सत्त्वमें स्थित कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण होता है। उसमें भी जिन कर्मपरमाणुओंकी शक्तिस्थिति उत्कर्षणके योग्य हो उनका ही उत्कर्षण होता है अन्यका नहीं। खुलासा इस प्रकार है—मान लो उदयावलिसे उपरितन स्थितिमें स्थित जो निषेक है उसके जिन परमाणुओंकी शक्तिस्थिति अपनी व्यक्त स्थितिके बराबर है। अर्थात् जिन्हें बँधे हुए एक समय अधिक उदयावलिसे न्यून कर्मस्थितिके बराबर काल बीत चुका है उन कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण नहीं होता क्योंकि इन कर्मपरमाणुओंमें शक्तिस्थितिका अत्यन्त अभाव है। इसी स्थितिमें स्थित निषेकके जिन कर्मपरमाणुओंकी शक्तिस्थिति एक समय शेष है। अर्थात् जिन्हें बँधे हुए दो समय अधिक उदयावलिसे न्यून कर्मस्थितिके बराबर काल बीत चुका है उन कर्मपरमाणुओंका भी उत्कर्षण नहीं होता क्योंकि यहाँपर निक्षेपका तो अभाव है ही अतिस्थापना भी कमसे कम जघन्य आबाधा प्रमाण नहीं पाई जाती। इस प्रकार इसी स्थितिमें स्थित निषेकके जिन कर्मपरमाणुओंकी शक्तिस्थिति दो समय और तीन समय आदिसे लेकर जघन्य आबाधाप्रमाण शेष है। अर्थात् जिन्हें बँधे हुए जघन्य आबाधासे न्यून कर्मस्थितिके बराबर काल बीत चुका है उन कर्मपरमाणुओंका भी उत्कर्षण नहीं होता क्योंकि यहाँपर अतिस्थापनाके पूरा हो जानेपर भी निक्षेपका अत्यन्त अभाव है। इसी स्थितिमें स्थित निषेकके जिन कर्मपरमाणुओंकी शक्तिस्थिति एक समय अधिक आबाधाप्रमाण शेष है। अर्थात् जिन्हें बँधे हुए एक समय अधिक आबाधाकालसे न्यून कर्मस्थितिके बराबर काल बीत चुका है उन कर्मपरमाणुओंका एक समय अधिक आबाधाप्रमाण उत्कर्षण होकर आबाधाके ऊपरकी स्थितिमें निक्षेप होना सम्भव है, क्योंकि यहाँपर अतिस्थापनाके साथ एकसमय प्रमाण निक्षेप ये दोनों पाये जाते हैं। इसी प्रकार इसी स्थितिमें स्थित निषेकके जिन कर्मपरमाणुओंकी शक्तिस्थिति दो समय अधिक जघन्य आबाधाप्रमाण तीन समय अधिक जघन्य आबाधाप्रमाण इत्यादि क्रमसे एक वर्ष, वर्षपृथक्त्व, एक सागर, सागरपृथक्त्व दस सागर, दस सागरपृथक्त्व सौ सागर, सौ सागरपृथक्त्व हजार सागर, हजार सागरपृथक्त्व लाख सागर, लाख सागरपृथक्त्व कोटि सागर, कोटि सागरपृथक्त्व अन्तःकोड़ाकोड़ी कोड़ाकोड़ी सागर और

कोडाकोडी सागरपृथक्त्वप्रमाण शेष है। अर्थात् उक्त शेष स्थितिको छोड़कर बाकी की कर्मस्थिति के बराबर काल बीत चुका है तो उन कर्म परमाणुओं का आबाधाप्रमाण अतिस्थापना को छोडकर अपनी-अपनी योग्य शेष रही शक्तिस्थितिप्रमाण स्थिति तक उत्कर्षण होकर निक्षेप होना सम्भव है।

यहाँ यह जो एक समय अधिक उदयावलिकी अन्तिम स्थितिको माध्यम बनाकर उत्कर्षण-का विचार किया जा रहा है सो उस स्थितिमें किस निषेकके कर्मपरमाणु हैं और किसके नहीं हैं इसका विचार करते हुए बतलाया है कि जिसका बन्ध किये हुए एक समय, दो समय और तीन समय आदिके क्रमसे एक आवलि काल व्यतीत हुआ है उन सब निषेकोंके कर्मपरमाणु विवक्षित स्थितिमें नहीं पाये जाते। कारण यह है कि बन्धके बाद एक आवलिकाल तक न्यूतन बन्धका अपकर्षण नहीं होता और आबाधा कालके भीतर निषेक रचना नहीं होती, अतः विवक्षित स्थितिके पूर्व एक आवलि काल तक बन्धको प्राप्त होनेवाले कर्मपरमाणुओंका उस स्थितिमें नहीं पाया जाना स्वाभाविक है। हा इस एक आवलिसे पूर्व बन्धको प्राप्त हुए समयप्रबद्धोंके कर्म परमाणु अपकर्षण होकर वहा पाये जाते हैं इसमें कोई बाधा नहीं आती। फिर भी ऐसे कर्म-परमाणुओंका यदि उत्कर्षण हो तो उनका निक्षेप एक समय अधिक एक आवलिकम कर्मस्थितिके अन्ततक हो सकता है। मात्र इनका निक्षेप तत्काल बंधनेवाले कर्मके आबाधा कालके ऊपर ही होगा यहां इतना विशेष जानना चाहिए। यह दूसरी प्ररूपणा है जो नवकबन्धकी मुख्यतासे की गई है। पहली प्ररूपणा प्राचीन सत्तामें स्थित कर्मों की मुख्यतासे की गई थी, इसलिए ये दोनों प्ररूपणाएँ स्वतन्त्र होनेसे इनका मूलमे अलग अलग विवेचन किया गया है।

यहा दूसरी प्ररूपणाके समय अवस्तुविकल्पोंका भी निर्देश किया गया है। किन्तु प्रथम प्ररूपणाके समय उनका निर्देश नहीं किया गया है, इसलिए यहा यह शंका होती है कि क्या प्रथम प्ररूपणाकी अपेक्षा एक भी अवस्तु विकल्प नहीं होता सो इसका समाधान यह है कि अवस्तु-विकल्प तो वहाँ भी सम्भव है। अर्थात् विवक्षित स्थिति (एक सनय अधिक उदयावलिकी अन्तिम स्थिति) में इससे पूर्व उदयावलिप्रमाण निषेकोंका सद्भाव नहीं पाया जाता फिर भी यह बात बिना कहे ही ज्ञात हो जाती है, इसलिए प्रथम प्ररूपणाके समय इन अवस्तु विकल्पोंका निर्देश नहीं किया है। विशेष खुलासा मूलमें यथास्थान किया ही है, इसलिए इसे वहासे विशेष रूपसे समझ लेना चाहिए।

उदयावलिके ऊपर जो प्रथम स्थिति है उसकी विवक्षासे यह प्ररूपणा की गई है। किन्तु इसके ऊपरकी स्थितिकी अपेक्षा प्ररूपणा करने पर अवस्तुविकल्प एक बढ़ जाता है, क्योंकि उदयावलिके भीतरकी सब स्थितियोमें स्थित निषेकोंके कर्मपरमाणु तो इसमें पाये ही नहीं जाते, साथ ही उससे उपरितन स्थितिमें स्थित निषेकके कर्मपरमाणु भी नहीं पाये जाते, क्योंकि इन निषेकोंमें स्थित कर्मपरमाणुओकी शक्तिस्थिति इस विवक्षित स्थितिके पूर्व ही समाप्त हो जाती है। तथा झीनस्थितिविकल्प एक कम होता है, क्योंकि आबाधामें एक समयकी कमी हो जानेसे झीनस्थितिविकल्पोंमें भी एक समयकी कमी हो गई है। मात्र इसकी अपेक्षा अझीन स्थितियोंमें भेद नहीं है। यह प्रथम प्ररूपणाकी अपेक्षा विचार है। इसी प्रकार दूसरी प्ररूपणाको ध्यानमें रखकर विचार कर लेना चाहिए। तथा आगे भी इसी प्रकार विचार कर किस निषेकके कितने कर्मपरमाणु उत्कर्षणसे झीनस्थिति हैं और कितने कर्मपरमाणु अझीनस्थिति हैं। साथ ही उनमें अवस्तुविकल्प कितने हैं और जिनका उत्कर्षण हो सकता है उनका वह कहाँ तक होता है इत्यादि

जातोंका पूर्वोक्त लक्षण और उत्कर्षण आदिके नियमोंको ध्यानमें रखकर विचार कर लेना चाहिए। मूलमें इसका विस्तारसे विचार किया ही है, इसलिए यहाँ विशेष नहीं लिखा जा रहा है।

संक्रमणकी अपेक्षा झीन और अझीन स्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका विचार करते हुए जो कुछ कहा गया है उसका भाव यह है कि उदयावलिके भीतर प्रविष्ट हुए जितने निषेक हैं उनके कर्मपरमाणु संक्रमणसे झीनस्थितिवाले और शेष अझीनस्थितिवाले हैं। मात्र नूतन बन्धका बन्धावलि कालतक अपकर्षण, उत्कर्षण और संक्रमण आदि नहीं होता इतनी विशेषता यहाँ और समझनी चाहिए।

उदयकी अपेक्षा झीन और अझीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका विचार करते हुए जो कुछ कहा गया है उसका भाव यह है कि जिस कर्मने अपना फल दे लिया है वह उदयसे झीनस्थिति वाला है और शेष सब कर्म उदयसे अझीन स्थितिवाले हैं।

स्वामित्व—यहाँ तक प्रकृति विशेषका आलम्बन लिए बिना सामान्यसे यह बतलाया गया है कि किस स्थितिमें स्थित कितने कर्म परमाणु अपकर्षण आदिसे झीनस्थितिवाले और अझीन स्थितिवाले हैं। आगे मिथ्यात्व आदि प्रत्येक कर्मकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंके उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य ऐसे चार भेद करके उनके स्वामित्वका विचार करके इस प्रकरणको समाप्त किया गया है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि अपकर्षण आदिकी अपेक्षा उत्कृष्ट झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका स्वामी गुणितकर्मांशिक जीव और अपकर्षण आदिकी अपेक्षा जघन्य झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका स्वामी क्षपितकर्मांशिक जीव होता है। इसमें जहाँ विशेषता है उसका प्रसंगसे निर्देश किया है।

अल्पबहुत्व—इसमें मिथ्यात्व आदि प्रत्येक कर्मकी अपेक्षा अपकर्षण आदिसे झीन स्थितिवाले कर्मपरमाणुओंके अल्पबहुत्वका विचार किया गया है।

स्थितिगचूलिका

पहले उत्कर्षादिके भेदसे प्रदेशविभक्तिका विस्तारसे विचार कर आये हैं। साथ ही अपकर्षण आदिकी अपेक्षा झीन और अझीन स्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका भी विचार कर आये हैं। किन्तु अभी तक उदयकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त आदि कर्मपरमाणुओंका विचार नहीं किया गया है, इसलिए इसी विषयका विस्तारसे विचार करनेके लिए स्थितिग नामक चूलिका आई है। इसमें जिन अधिकारोंका आश्रय लेकर उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त आदिका विचार किया गया है वे अधिकार ये हैं—समुत्कीर्तना स्वामित्व और अल्पबहुत्व।

समुत्कीर्तना—इस अधिकारमें उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त, निषेकस्थितिप्राप्त यथानिषेकस्थितिप्राप्त और उदयस्थितिप्राप्त कर्मपरमाणु हैं यह स्वीकार किया गया है। जो कर्मपरमाणु उदय समयमें अग्रस्थितिमें दृष्टिगोचर होते हैं वे उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त कर्मपरमाणु हैं। यहाँ पर उत्कृष्ट स्थितिसे अग्रस्थिति ली गई है। एक समयप्रबद्धकी विविध स्थितियोंके जितने कर्मपरमाणु उदयके समय अग्रस्थितिमें दृष्टिगोचर होते हैं उन सबकी उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त संज्ञा है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। जो कर्मपरमाणु बन्धके समय जिस स्थितिमें निक्षिप्त होते हैं अपकर्षण और उत्कर्षण होकर भी उदय कालमें वे यदि उसी स्थितिमें स्थित रहते हैं तो उनकी निषेकस्थितिप्राप्त संज्ञा

है। जो कर्मपरमाणु वन्धके समय जिस स्थितिमें निक्षिप्त होते हैं वे यदि उत्कर्षण या अपकर्षण हुए विना उदयकालमे उसी स्थितिमें रहते हैं तो उनकी यथानिषेकस्थितिप्राप्त संज्ञा है। तथा वन्धके समय जो कर्मपरमाणु जिस निषेकस्थितिमें प्राप्त हुए हैं वे उदयके समय यदि उसी निषेकस्थितिमे न रहकर जहाँ कहीं दिखलाई देते हैं तो उनकी उदयस्थितिप्राप्त संज्ञा है। इसप्रकार उत्कृष्टस्थितिप्राप्त आदिके भेदसे ये कर्मपरमाणु चार प्रकारके हैं यह निश्चित होता है।

स्वामित्व—इस अधिकारमे मिथ्यात्व आदि अवान्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा उक्त चार प्रकारके कर्मपरमाणुओंके उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य ये चार भेद करके उनके स्वामित्वका विचार किया गया है।

अल्पवहुत्व—इस अधिकारमें उक्त सव भेदोंके अल्पवहुत्वका विचार किया गया है।

इसप्रकार इतना कथन करनेके वाद चूलिका सहित प्रदेशविभक्ति अधिकार समाप्त होता है।

—०—

विषय-सूची



कसायपाहुडस्स

पदेसविहत्ती

पंचमो अत्थाहियारो



सिरि-जइवसहाइरियविरइय-चुण्णिसुत्तसमण्णिदं

सिरि-भगवंतगुणहरभडारश्रोवइट्ठं

क सा य पा हु डं

तस्स

सिरि-वीरसेणाइरियविरइया टीका

जयधवला

तत्थ

पदेसविहत्ती णाम पंचमो अत्थाहियारो



❀ कालो।

§ १. कालो उच्चदि त्ति भणिदं होदि।

❀ काल।

§ १ कालका कथन करते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

⊛ मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसविहत्तिओ केवचिरं कालादो होदि ।

§ २. सुगमं ।

⊛ जहण्णुक्कस्सेणेगसमओ ।

§ ३ सत्तमपुढविणेरइयस्स उक्कस्साउअस्स चरिमसमए चेव उक्कस्सपदेससंतकम्मुवलंभादो ।

⊛ अणुक्कस्सपदेसविहत्तिओ केवचिरं कालादो होदि ।

§ ४ सुगमं ।

⊛ जहण्णुक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा ।

§ ५ चदुगदिणिगोदे पडुच्च एसो कालणिद्देसो । णिच्चणिगोदे पुण पडुच्च अणादिओ अपज्जवसिदो अणादिओ सपज्जवसिदो च होदि, अलद्धतसभावाणमुक्कस्सदव्वाणुववत्तीदो । अणुक्कस्सपदेसविहत्तीए अणंतकालावट्ठाणं कधं घडदे ? ण, उक्कस्सपदेसट्ठाणप्पहुडि जाव जहण्णट्ठाणं ति एदेसु अणंतेसु ट्ठाणेसु अणंतकालावट्ठाणं पडि विरोहाभावादो ।

⊛ मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवका कितना काल है ?

§ २. यह सूत्र सुगम है ।

⊛ जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

§ ३ क्योंकि सातवीं पृथिवीके नारकीके उत्कृष्ट आयुके अन्तिम समयमें ही उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म उपलब्ध होता है ।

⊛ अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका कितना काल है ।

§ ४ यह सूत्र सुगम है ।

⊛ जघन्य और उत्कृष्ट अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनोंके बराबर है ।

§ ५. चतुर्गति निगोद जीवोंकी अपेक्षा कालका यह निर्देश किया है। किन्तु नित्यनिगोद जीवोंकी अपेक्षा तो अनादि-अनन्त और अनादि-सान्त काल होता है, क्योंकि जिन जीवोंने त्रसभावको नहीं प्राप्त किया है उनके उत्कृष्ट द्रव्यकी प्राप्ति सम्भव नहीं है ।

शंका—अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अनन्त कालतक अवस्थान कैसे बन सकता है ?

समाधान—नहीं क्योंकि उत्कृष्ट प्रदेशस्थानसे लेकर जघन्य प्रदेशस्थान तक जो अनन्त स्थान हैं उनमें अनन्त काल तक अवस्थान होनेमें कोई विरोध नहीं आता है ।

❀ अण्णोवदेसो जहण्णेण असंखेज्जा लोगा त्ति ।

§ ६. सव्वे जीवपरिणामा असंखेज्जलोगमेत्ता चेव णाणंता, तहोवदेसाभावादो। तत्थुक्कस्सपदेससंतकम्मकारणपरिणामकलावं मोत्तूण सेसपरिणामट्ठाणेसु अवट्ठाण-कालो जह० असंखेज्जलोगमेत्तो चेव तम्हा अणुक्कस्सपदेसकालो जह० असंखेज्जलोग-मेत्तो त्ति इच्छियव्वो। ण च पदेसुत्तरादिकमेण संतकम्मट्ठाणेसु परिब्भमणणियमो अत्थि, एक्कसराहेण अणंताणि ट्ठाणाणि उल्लंघियूण वि परिब्भमणुवलंभादो[1]। एदं केसिं पि आइरियाणं वक्खाणंतरं। एदेसु दोसु उवदेसेसु एक्केणेव सच्चेण होदव्वं, अण्णोण्णविरुद्धत्तादो। तदो एत्थ जाणिदूण वत्तव्वं।

❀ अथवा खवगं पडुच्च वासपुधत्तं ।

§ ७. गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सत्तमाए पुढवीए उक्कस्सपदेसं करिय पुणो समयाविरोहेण एइंदिएसु मणुस्सेसु च उववज्जिय अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्सेहि संजमं पडिवज्जिय णिव्वुइं गयम्मि अणुक्कस्सदव्वस्स वासपुधत्तमेत्तकालुवलंभादो।

❀ अन्य उपदेशके अनुसार जघन्य काल असंख्यात लोकप्रमाण है ।

§ ६ कारण कि जीवोंके सब परिणाम असंख्यात लोकमात्र ही होते हैं, अनन्त नहीं होते, क्योंकि इस प्रकारका उपदेश नहीं पाया जाता। उनमेंसे उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके कारणभूत परिणामकलापको छोड़कर शेष परिणामोंमें अवस्थित रहनेका जघन्य काल असंख्यात लोक-प्रमाण ही है, इसलिए अनुत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका जघन्य काल असंख्यात लोकप्रमाण है ऐसा स्वीकार करना चाहिए। और उत्तरोत्तर एक एक प्रदेशके अधिकके क्रमसे सत्कर्मस्थानोंमें परिभ्रमण करनेका कोई नियम नहीं है, क्योंकि एक साथ अनन्त स्थानोंको उल्लंघन करके भी परिभ्रमण पाया जाता है। यह किन्हीं आचार्योंका व्याख्यानन्तर है सो इन दो उपदेशोंमेंसे एक उपदेश ही सत्य होना चाहिए, क्योंकि ये दोनों उपदेश परस्परमें विरोधको लिये हुए हैं, इसलिए यहाँपर जानकर व्याख्यान करना चाहिए।

❀ अथवा क्षपककी अपेक्षा वर्षपृथक्त्वप्रमाण काल है ।

§ ७ क्योंकि जो जीव गुणितकर्मांशिककी विधिसे आकर सातवीं पृथिवीमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मको करके पुनः यथाशास्त्र एकेन्द्रियोंमें और मनुष्योंमे उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष कालके द्वारा संयमको ग्रहणकर मुक्तिको प्राप्त होता है उसके अनुत्कृष्ट द्रव्यका वर्षपृथक्त्वप्रमाण काल उपलब्ध होता है।

विशेषार्थ—मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है यह तो स्पष्ट ही है, क्योंकि गुणितकर्मांशविधिसे आकर जो अन्तमें उत्कृष्ट आयुके साथ दूसरी बार सातवें नरकमें उत्पन्न होता है उसके अन्तिम समयमें ही मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति देखी जाती है। इसकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके कालके विषयमे दो उपदेश पाये

---

१. आ० प्रतौ 'परिभमणमणुवलभादो' इति पाठः।

* एवं सेसाणं कम्माणं णादूण णेदव्वं ।

§ ८. तं जहा—अट्ठकसाय-सत्तणोकसायाणं मिच्छत्तभंगो, जहण्णुक्कस्सकालेहि उक्कस्साणुक्कस्सदव्वविसएहि तत्तो भेदाभावादो । अणंताणुबंधिचउक्कस्स वि मिच्छत्तभंगो चेव । णवरि अणुक्कस्स० जहण्णेण अंतोमुहुत्तं, अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय पुणो संजुत्तो होदूण अंतोमुहुत्तेण विसंजोइदम्मि तदुवलंभादो । चदुसंज० पुरिस० उक्क० जहण्णु० एगस० । अणुक्क० अणादि-अपज्ज० अणादि-सपज्ज० सादि-सपज्ज० । जो सो सादि-सपज्ज० तस्स जहण्णुक्क० अंतो० । इत्थि० उक्क०

जाते हैं। एक उपदेशके अनुसार यह अनन्त काल प्रमाण बतलाया है। इसकी व्याख्या करते हुए वीरसेन स्वामीने जो लिखा है उसका भाव यह है कि नित्य निगोद जीव दो प्रकारके होते हैं—एक वे जो अबतक न तो निगोदसे निकले हैं और न निकलेंगे। इनकी अपेक्षा तो मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल अनादि-अनन्त है। दो जो नित्य निगोदसे निकलकर क्रमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्त कर देते हैं उनकी अपेक्षा अनादि-सान्त काल है। पर चूर्णिसूत्रमें इन दोनों प्रकारके कालोंका ग्रहण न कर इतर निगोद जीवोंकी अपेक्षा कालका विचार किया गया है। आशय यह है कि एक बार मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति करके जो क्रमसे इतर निगोदमें चले जाते हैं उनके वहाँसे निकलकर पुनः उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके प्राप्त करनेमें अनन्त काल लगता है, इसलिए चूर्णिसूत्रमें मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अनन्त काल कहा है। यह एक उपदेश है। किन्तु एक दूसरा उपदेश भी मिलता है। इसके अनुसार मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अनन्तप्रमाण न प्राप्त होकर असंख्यात लोकप्रमाण बन जाता है। इन आचार्योंके मतसे इस उपदेशके कारणका निर्देश करते हुए वीरसेन आचार्य लिखते हैं कि जीवोंके शुभ परिणाम असंख्यात लोकप्रमाण ही उपलब्ध होते हैं और सब प्रदेशसत्कर्मस्थानोंमें जीव क्रमसे ही प्राप्त होता है ऐसा कोई नियम नहीं है अतः जघन्य काल असंख्यात लोकप्रमाण बननेमें कोई बाधा नहीं आती। अनुत्कृष्टके जघन्य कालके विषयमें ये दो उपदेश हैं। यह कह सकना कठिन है कि इनमेंसे कौन उपदेश सत्य है, इसलिए यहाँ दोनोंका संग्रह किया गया है। यह सम्भव है कि गुणितकर्मांशिक जीव सातवें नरकके अन्तमें उत्कृष्ट प्रदेशसंचय करके और वहाँसे निकलकर क्रमसे मनुष्य होकर वर्षपृथक्त्व कालके भीतर मोहनीयका क्षपण कर दे। इसलिए यहाँ मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल वर्षपृथक्त्वप्रमाण भी कहा है।

* इसी प्रकार शेष कर्मोंका जानकर ले जाना चाहिए।

§ ८. खुलासा इस प्रकार है—आठ कषाय और सात नोकषायोंका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है क्योंकि जघन्य और उत्कृष्ट कालकी अपेक्षा तथा उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट द्रव्यविशेषकी अपेक्षा मिथ्यात्वसे इनमें कोई भेद नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भी मिथ्यात्वके समान ही भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि इसकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है, क्योंकि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके और संयुक्त होकर जो अन्तर्मुहूर्तमें पुनः इसकी विसंयोजना करता है उसके यह काल पाया जाता है। चार संज्वलन और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल अनादि-अनन्त, अनादि-सान्त और सादि-सान्त है। उसमें जो सादि-सान्त काल है उसकी

जहण्णु० एगस० । अणुक्क० ज० दसवस्ससहस्साणि वासपुधत्तेण सादि०, उक्क० अणंतकालं । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं उक्क० पदे०वि० केव० कालादो होदि ? जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ ।

§ ६. एदेसिं चेव अणुक्कस्सदव्वकालपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

❀ णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताण अणुक्कस्सदव्वकालो जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल वर्षपृथक्त्व अधिक दस हजार वर्ष है और उत्कृष्ट अनन्त काल है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका कितना काल है ? जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

विशेषार्थ—इन सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति अपने अपने उत्कृष्ट स्वामित्वके अन्तिम समयमें होती है, इसलिए यहा सबकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है । मात्र जिस प्रकृतिकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके कालमें कुछ विशेषता है उसका यहाँ स्पष्टीकरण करते हैं । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त क्यों है इसके कारणका निर्देश मूलमें ही किया है । चार सज्वलन और पुरुषवेदकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति अभव्योंकी अपेक्षा अनादि-अनन्त, भव्योंकी अपेक्षा अनादि-सान्त और क्षपकश्रेणिमें सादि-सान्त कही है । क्षपकश्रेणिमें इनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होनेके बाद अन्तर्मुहूर्त कालतक अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति सम्भव है, इसलिए इनकी सादि-सान्त अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है । स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति गुणितकर्मांशिक ऐसे जीवके भी होती है जो अन्तमें पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण आयुके साथ असख्यात वर्षकी आयुवाले जीवोंमे उत्पन्न होकर आयुके अन्तिम समयमें स्थित है । उसके बाद यह जीव देव होता है और देव पर्यायसे आकर ऐसे जीवका वर्षपृथक्त्वकी आयुवाला मनुष्य होकर मोक्ष जाना भी सम्भव है । स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होनेके बाद उसकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका इससे कम काल सम्भव नहीं है । यही कारण है कि यहाँपर इसका जघन्य काल वर्षपृथक्त्व अधिक दस हजार वर्षप्रमाण कहा है । यहाँ जिन प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल कहा गया है उनकी इस विभक्तिका उत्कृष्ट काल मिथ्यात्वके समान ही है यह बिना कहे ही जान लेना चाहिए, क्योंकि कालमें मिथ्यात्वसे जितनी विशेषता थी वही यहाँ पर कही गई है ।

§ ६ अब सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट द्रव्यके कालका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट द्रव्यका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ १०. कुदो ? सम्मत्तं पडिवज्जिय णिस्संतकम्मियम्मि सम्मत्तसंतकम्मं अंतोमुहुत्तं धरिय खविददंसणमोहणीयम्मि तदुवलंभादो। उक्कस्ससामियस्स वा खवयस्स अणुक्कस्सम्मि पदिय णिस्संतीकरणेण सव्वजहण्णंतोमुहुत्तमेत्तकालो घेत्तव्वो, पुव्विल्लादो वि एदस्स जहण्णभावदंसणादो।

❀ उक्कस्सेण बेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि।

§ ११. णिस्संतकम्मियमिच्छाइट्ठिम्मि सम्मत्तं पडिवज्जिय पुणो मिच्छत्तं गंतूण पलि० असं० भागमेत्तकालेण चरिमुव्वेल्लणकंडयस्स चरिमफालीए सेसाए सम्मत्तं घेत्तूण पढमछावट्ठिं भमिय पुणो मिच्छत्तं गंतूण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तकालेण चरिमुव्वेल्लणकंडयस्स चरिमफालीए सेसाए सम्मत्तं घेत्तूण बिदियछावट्ठिं भमिय पुणो मिच्छत्तं गंतूण पलिदो० असं० भागमेत्तकालेणुव्वेल्लिदसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तम्मि तदुवलंभादो।

---

§ १०. क्योंकि इन दो प्रकृतियोंकी सत्तासे रहित जो जीव सम्यक्त्वको प्राप्त करके और अन्तर्मुहूर्त काल तक सम्यक्त्वकी सत्तावाला होकर दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करता है उसके इन दोनों प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट द्रव्यका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त पाया जाता है। या इनके उत्कृष्ट द्रव्यका स्वामी जो क्षपक जीव इन्हें अनुत्कृष्ट करके निःसत्त्व कर देता है उसके इनके अनुत्कृष्ट द्रव्यका सबसे जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहना चाहिए, क्योंकि पूर्वोक्त कालसे भी यह काल जघन्य देखा जाता है।

❀ उत्कृष्ट काल साधिक दो छ्यासठ सागरप्रमाण है।

§ ११. क्योंकि इन दो प्रकृतियोंकी सत्तासे रहित जो मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्वको प्राप्त होकर पुनः मिथ्यात्वमें जाकर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक इनकी उद्वेलना करते हुए अन्तिम उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिके शेष रहनेपर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ और प्रथम छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण करके पुनः मिथ्यादृष्टि हुआ। तथा वहाँ पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक उद्वेलना करते हुए चरम उद्वेलना काण्डककी अन्तिम फालिके शेष रहनेपर सम्यक्त्वको प्राप्त करके द्वितीय छ्यासठ सागर काल तक उसके साथ भ्रमण करता रहा और अन्तमें मिथ्यादृष्टि होकर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा जिसने सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना की उसके उक्त काल उपलब्ध होता है।

विशेषार्थ—यहाँपर दो चूर्णिसूत्रों द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके जघन्य और उत्कृष्ट कालका निर्देश किया गया है। ऐसा करते हुए वीरसेन स्वामीने जघन्य काल दो प्रकारसे घटित करके बतलाया है। प्रथम उदाहरणमें तो ऐसा जीव लिया है जिसके इन दो कर्मोंकी सत्ता नहीं है। ऐसा जीव सम्यग्दृष्टि होकर अन्तर्मुहूर्तमें यदि इनकी क्षपणा करता है तो उसके इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तर्मुहूर्त काल उपलब्ध होता है। दूसरे उदाहरणमें ऐसा क्षपक जीव लिया है जो इनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला है।

---

१ ता० प्रतौ 'घेत्तूण पढमछावट्ठिं' इति पाठः।

❀ जहण्णकालो जाणिदूण णेदव्वो।

§ १२. सुगमं।

§ १३. एवं चुण्णिसुत्तमस्सिदूण कालपरूवणं करिय संपहि एत्थुच्चारणाइरियवक्खाणक्कमं भणिस्सामो। कालो दुविहो—जहण्णओ उक्कस्सओ चेदि। उक्कस्सए पयदं। दुवि०—ओघे० आदे०। ओघे० मिच्छत्त-अट्ठक०-सत्तणोक० उक्क० पदे० विहत्ती० केवचिरं काला०? जहण्णुक्क० एगस०। अणुक्क० ज० वासपुधत्तं, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। एवं अणंताणु०चउक्क०। णवरि अणुक्क० ज० अंतो०। सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० पदेस० जहण्णुक्क० एगस०। अणुक्क० ज० अंतो०, उक्क० वेच्छावट्ठिसागरोमाणि सादि०। चदुसंज०-पुरिसवेदाणं उक्क० पदे० जहण्णुक्क०

इस जीवके अन्तर्मुहूर्तमें इन कर्मोंकी नियमसे क्षपणा हो जाती है, इसलिए इसके भी इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तर्मुहूर्त काल उपलब्ध होता है। इस प्रकार अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके ये दो उदाहरण उपस्थित कर वीरसेन स्वामी प्रथमकी अपेक्षा द्वितीयको ही प्रकृतमें उपयुक्त मानते हुए प्रतीत होते हैं, क्योंकि प्रथमकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जितना काल है उससे दूसरे उदाहरणकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल स्पष्टत: कम है और जघन्य कालमें जो सबसे न्यून हो वही लिया जाता है। यह तो इन दोनों कर्मोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके जघन्य कालका विचार हुआ। उत्कृष्ट कालका स्पष्टीकरण स्वयं वीरसेन स्वामीने किया ही है। यहाँ इतना ही संकेत करना है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलनाका काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण होकर भी न्यूनाधिक है, इसलिए जहाँ जिस कर्मकी अन्तिम उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालि प्राप्त हो वहां उसके सद्भावमें रहते हुए अन्तिम समयमें ही सम्यक्त्वको प्राप्त कराना चाहिए।

❀ जघन्य कालको जानकर ले जाना चाहिए।

§ १२ यह सूत्र सुगम है।

विशेषार्थ—इस चूर्णिसूत्रमें जघन्य पदसे तात्पर्य मिथ्यात्व आदि अट्ठाईस प्रकृतियोंके जघन्य द्रव्यसे है। उसका जघन्य और उत्कृष्ट जो काल हो उसे जानकर घटित कर लेना चाहिए यह बात इस चूर्णिसूत्रमें कही गई है।

§ १३. इस प्रकार चूर्णिसूत्रके आश्रयसे कालका कथन करके अब यहाँ पर उच्चारणाचार्यके व्याख्यानके क्रमको कहेंगे। काल दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, आठ कषाय और सात नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका कितना काल है? जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल वर्षपृथक्त्वप्रमाण है और उत्कृष्ट अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा काल जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल साधिक दो

एगस० । अणुक्क० अणादिओ अपज्जवसिदो अणादिओ सपज्जवसिदो सादिओ सपज्ज० । तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवसिदो तस्स इमो णिद्देसो—जहण्णु० अंतो० । इत्थिवेद० उक्क० पदे० जहण्णुक्क० एगस० । अणुक्क० ज० दसवस्ससहस्साणि वासपुधत्तेणब्भहियाणि, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा ।

§ १४ आदेसेण० णेरइएसु मिच्छत्त-सोलसक०-छण्णोक० उक्क० पदे० जहण्णुक्क० एगस० । अणुक्क० जह० अंतो० । कुदो ? सत्तमाए पुढवीए समयाहिय असंखे० फद्दयमेत्ताउसेसे आउए दव्वमुक्कस्सं करिय विदियसमयमादिं कादूण अंतोमुहुत्तमेत्तकालं अणुक्कस्सदव्वेणच्छिय णिग्गयस्स तदुवलंभादो । णेरइयचरिमसमए पदेसस्सुक्कस्ससामित्त परूविदसुत्तेण सह एदस्स वक्खाणस्स कधं ण विरोहो ? विरोहो चेव । किंतु आउअबंधपढमकालम्मि आउपदेसबंधणादो उवरिमकम्मपदेससंचया बहुओ त्ति जइवसहाइरिओवएसो तेण णेरइयचरिमसमए चेव उक्कस्सपदेससामित्तं । उच्चारणाइरियाणं पुण अहिप्पाएण उवरिमसंचयादो आउअबंधकालम्मि आउपदेसबंधो

छयासठ सागरप्रमाण है। चार संज्वलन और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अनादि-अनन्त, अनादि-सान्त और सादि-सान्त काल है। इनमेंसे जो सादि-सान्त काल है उसका यह निर्देश है। उसकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल वर्षपृथक्त्व अधिक दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनके बराबर है।

विशेषार्थ—यहां उच्चारणाचार्यके व्याख्यानसे वही सब काल कहा गया है जो कि चूर्णिसूत्रों द्वारा निर्दिष्ट किया गया है। मात्र चूर्णिसूत्रमें मिथ्यात्व आदि की अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल तीन प्रकार से बतलाया गया है सो यहाँ अनन्त काल और असंख्यात लोकप्रमाण काल इन दो का छोड़कर एकका ही ग्रहण किया गया है, क्योंकि उक्त तीन प्रकारके कालोंमें से सबसे जघन्य काल यही प्राप्त होता है और यह निर्विवाद है।

§ १४ आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है क्योंकि सातवीं पृथिवीमें आयुके एक समय अधिक असंख्यात स्पर्धकमात्र शेष रहने पर उक्त कर्मोंके द्रव्यको उत्कृष्ट करके और दूसरे समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त काल तक अनुत्कृष्ट द्रव्यके साथ रहकर निकलनेवाले जीवके उक्त काल पाया जाता है।

शंका—नारकीके अन्तिम समयमें प्रदेशसत्कर्मके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करनेवाले सूत्रके साथ इस व्याख्यानका विरोध कैसे नहीं प्राप्त होता ?

समाधान—उक्त सूत्रके साथ इस व्याख्यानका विरोध तो है ही किन्तु आयुबन्धके काल में जो प्रदेशोंका बन्ध होता है उससे आगेके कालमें होनेवाला प्रदेशोंका संचय बहुत है यह यतिवृषभाचार्यका उपदेश है, इसलिए इस उपदेशके अनुसार नारकीके अन्तिम समयमें ही उत्कृष्ट प्रदेशस्वामित्व प्राप्त होता है। परन्तु उच्चारणाचार्यके अभिप्रायसे आयुबन्ध कालसे आगेके

हुओ त्ति तेण आउअबंधे चरिमसमयअपारद्धे चेव उक्कस्ससामित्तं होदि त्ति तदो माणाकणिद्दाए णिण्णयाभावादो त्थप्पं काऊण वक्खाणेयव्वं। उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि। णवरि अणंताणु०चउक्क० जह० एगसमओ। कुदो? चउवीससंतकम्मियउवसमसम्मादिट्ठिम्मि सासणं गतूण अणंताणुबंधिसंतमुप्पाइय विदियसमए णिप्पिलिदम्मि तदुवलभादो। उक्क० त चेव। सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अणुक्क० ज० एग०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि। तिण्हं वेदाणमुक्क० पदेस० जहण्णुक्क० एगस०। अणुक्क० जह० दसवस्ससहस्साणि समयूणाणि, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि।

कालमें होनेवाले सञ्चयसे आयुबन्धके कालमें प्रदेशोंका क्षय बहुत होता है इसलिए आयु बन्धके प्रारम्भ होनेके पूर्व अन्तिम समयमें ही अर्थात् आयुबन्ध प्रारम्भ होनेके अनन्तर पूर्व समयमें ही उत्कृष्ट स्वामित्व होता है। अतएव जिनाज्ञाका निर्णय न होनेसे इस विषयको स्थगित करके व्याख्यान करना चाहिए।

उक्त प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है, क्योंकि चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जो उपशमसम्यग्दृष्टि नारकी जीव सासादन गुणस्थानको प्राप्त होकर और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके सत्त्वको उत्पन्न करके दूसरे समयमें अन्य गतिमें चला जाता है उसके एक समय काल पाया जाता है। तथा उत्कृष्ट काल वही है। अर्थात् तेतीस सागर ही है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। तीनों वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम दस हजार वर्ष है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है।

विशेषार्थ—सामान्यसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति सातवें नरकमें आयुबन्धसे पूर्व अन्तिम समयमें होती है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है तथा उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके बाद नरकभवमें जो अन्तर्मुहूर्त काल शेष बचता है वह इन कर्मोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल है और इसका उत्कृष्ट काल सम्पूर्ण तेतीस सागर उस नारकीके होता है जिसके उस पर्यायमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति नहीं होती। यही कारण है कि उक्त कर्मोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर कहा है। मात्र अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय भी बन जाता है, इसलिए कारण सहित इस कालका निर्देश अलगसे किया है। यहाँ अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके जघन्य कालका निर्देश करके 'उक्क० त चेव' कहकर उत्कृष्ट काल भी कह दिया है पर इससे यह मिथ्यात्व आदिकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके उत्कृष्ट काल से अलग है ऐसा नहीं समझना चाहिए, अन्यथा 'त चेव' पद देनेकी कोई सार्थकता नहीं थी। सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति उत्कृष्ट स्वामित्वके अनुसार एक समयके लिए होती है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा जो जीव अपनी-अपनी उद्वेलनाके अन्तिम

§ १५ पढमाए जाव छट्ठि त्ति मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० उक्क० पदेस० जहण्णुक्क० एगस० । अणुक्क० ज० पढमाए दसवस्ससहस्साणि समऊणाणि । कुदो समऊणत्तं ? उप्पण्णपढमसमए पदेसस्स उक्कस्सत्तुवलंभादो । सेसासु पुढवीसु ज० सगसगजहण्णट्ठिदीओ समऊणाओ, उक्क० सगसगुक्कस्सट्ठिदीओ । एवमणंताणु० चउक्क०-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं । णवरि अणुक्क० ज० एगस० । सत्तमीए णिरओघं । णवरि इत्थि-पुरिस-णवुंसयवेदाणमुक्क० पदे० जहण्णुक्क० एग० । अणुक्क० ज० बावीसं सागरोवमाणि, उक्क० तेत्तीसं साग० । अणंताणु०चउक्क० उक्क० पदे० जहण्णुक्क० एग० । अणुक्क० ज० अंतो० । कुदो ण एगसमओ ? सत्तमाए पुढवीए सासणगुणेण णिग्गमाभावादो । उक्क० तेत्तीसं सागरो० ।

समयमें नरकमें उत्पन्न होता है उसके वहाँ इसकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति एक समय तक देखी जाती है, अतः इन दोनों प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कहा है। इसका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है यह स्पष्ट ही है। तीनों वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति नरकमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें सम्भव है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा नरककी जघन्य स्थितिमेंसे इस एक समयको कम कर देने पर तीनों वेदोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम जघन्य आयुप्रमाण होता है और इसका उत्कृष्ट काल नरककी उत्कृष्ट आयुप्रमाण है यह स्पष्ट ही है।

§ १५. पहली पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें मिथ्यात्व बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल प्रथम पृथिवीमें एक समय कम दस हजार वर्ष है।

शंका—एक समय कम क्यों है ?

समाधान—क्योंकि वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें ही उत्कृष्ट सत्त्व होता है।

शेष पृथिवियोंमें उक्त प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी-अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल वहाँ अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्क, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा काल जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है। सातवीं पृथिवीमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। तथा अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल बाईस सागर है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है।

शंका—एक समय क्यों नहीं है ?

समाधान—क्योंकि सातवीं पृथिवीसे सासादन गुणस्थानके साथ निर्गमन नहीं होता है।

तथा उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है।

विशेषार्थ—प्रथमादि छह पृथिवियोंमें गुणितकर्मांशविधिसे आये हुए जीवके नरकमें

§ १६. तिरिक्खगदीए तिरिक्खेसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० उक्क० पदे० जहण्णुक्क० एगस० । अणुक्क० ज० खुद्दाभवग्गहणं । एदं समयूणं ति किं ण उच्चदे ? ण, णेरइयेहिंतो णिग्गयस्स अपज्जत्तएसु अणंतरसमए उववादाभावादो । अणंताणु०चउक्क०-इत्थिवेदाणमेगस० । सव्वासिमुक्क० अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टा । सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० पदे० जहण्णुक्क० एग० । अणुक्क० ज० एग०, उक्क०

उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है, इसलिए इन नरकोंमें उक्त कर्मोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहा है। मात्र इन नरकोंमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति सामान्य नारकियोंके समान भी सम्भव है, इसलिए इन नरकोंमें इसका जघन्य काल एक समय कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति प्रथमादि छह नरकोंमें जो गुणितकर्मांशिक जीव आकर और वहाँ उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्तमें यथाशास्त्र उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त करता है उसके अन्तिम समयमें होती है, अत इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा इनकी उद्वेलनामें एक समय शेष रहने पर जो उक्त नरकोंमें उत्पन्न होता है उनके अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति एक समय देखी जाती है, अत उक्त नरकोंमें इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कहा है और इसका उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। सातवीं पृथिवीमें अन्य सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल सामान्य नारकियोंमें जिस प्रकार घटित करके बतला आये हैं उस प्रकारसे घटित कर लेना चाहिए। मात्र जिन प्रकृतियोंमें कुछ विशेषता है उसका स्पष्टीकरण करते हैं। तीनों वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति तो गुणितकर्मांशिक जीवके यहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें ही होती है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा इस एक समयको सातवें नरकी जघन्य स्थितिमेंसे कम कर देनेपर यहाँ उनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल पूरा बाईस सागर प्राप्त होता है और इसका उत्कृष्ट काल यहाँकी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। यहाँ अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामित्व ओघके समान है, इसलिए इनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल पूरा तेतीस सागर कहा है। यहाँ अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय क्यों नहीं बनता इसके कारणका निर्देश मूलमें ही किया है।

§ १६ तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमे मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण है।

शंका—इसे एक समय कम क्यों नहीं कहते ?

समाधान—नहीं, क्योंकि नारकियोंमेंसे निकले हुए जीवका अनन्तर समयमें अपर्याप्तक जीवों में उत्पाद नहीं होता।

अनन्तानुबन्धीचतुष्क और स्त्रीवेदकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और सबका उत्कृष्ट काल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनके बराबर है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

तिण्णि पलिदोवमाणि पलिदोवमस्स असं०भागेण सादिरे०।

§ १७ पंचिंदियतिरिक्खतियम्मि छव्वीसं पयडीणमुक्क० पदे० जहण्णुक० एगस०। अणुक्क० ज० खुद्दा० अंतोमु०, अणंताणु०चउक्क०-इत्थिवेदाणमेगस०, उक्क० सव्वासिं तिण्णि पलिदोवमाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमित्थिवेदभंगो।

अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तीन पल्य प्रमाण है।

विशेषार्थ—यहाँ सब कर्मोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति अपने अपने स्वामित्व के अनुसार एक समयके लिए होती है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। आगेकी मार्गणाओंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिए, इसलिए आगे सब कर्मोंकी मात्र अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके कालका स्पष्टीकरण करेंगे। तिर्यञ्चोंमें जघन्य आयु क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण है और कायस्थिति अनन्त काल प्रमाण है इसलिए इनमें छब्बीस प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण और उत्कृष्ट अनन्त काल कहा है। मात्र यहाँ अनन्तानुबन्धीचतुष्क और स्त्रीवेदकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय भी बन जाता है इसलिए इसका अलगसे निर्देश किया है। जो स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति करनेके बाद एक समय तक तिर्यञ्चोंमें रहकर देव हो जाता है उसके स्त्रीवेदकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय बन जाता है और जिस तिर्यञ्चके अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके तिर्यञ्च पर्यायमें रहनेका काल एक समय शेष रहने पर सासादनगुणस्थान प्राप्त करके उससे संयुक्त हुआ है उसके अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय बन जाता है। तिर्यञ्चोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय उद्वेलनाकी अपेक्षा बन जाता है, इसलिए इसका जघन्य काल एक समय कहा है। सम्यक्त्वकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कृतकृत्यवेदक सम्यक्त्वकी अपेक्षा भी बन जाता है इतना यहाँ विशेष जानना चाहिए। तथा जो तिर्यञ्च पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक इनकी उद्वेलना करते हुए अन्तमें तीन पल्यकी आयुके साथ उत्तम भोगभूमिमें उत्पन्न होते हैं और वहाँ अविनश्वर समय तक सम्यक्त्वके साथ रहते हुए इनकी सत्ता बनाये रखते हैं उनके इस सब कालके भीतर उक्त दोनों प्रकृतियोंकी सत्ता बनी रहती है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग अधिक तीन पल्य कहा है।

§ १७ पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल तिर्यञ्चोंमें क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण और शेष दो में अन्तर्मुहूर्त है। किन्तु अनन्तानुबन्धीचतुष्क और स्त्रीवेदकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और सबका उत्कृष्ट काल पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है।

विशेषार्थ—पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंकी जघन्य स्थिति क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण और शेष दो की अन्तर्मुहूर्त है। तथा सबकी कायस्थिति पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है इसलिए इनमें छब्बीस प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल क्रमसे क्षुल्लक भवग्रह-

§ १८. पंचि०तिरि०अपज्ज० छव्वीसं पयडीणं उक्क० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अणुक्क० ज० खुद्दाभव० समऊणं, उक्क० अंतो०। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमेवं चेव। णवरि अणुक्क० ज० एगस०। एवं मणुसअपज्जत्ताणं।

§ १९. मणुसतियम्मि अट्ठावीसं पयडीणं उक्क० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अणुक्क० ज० खुद्दा० अंतो० समऊणं, उक्क० सगट्ठिदी। णवरि सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क०-इत्थिवेद० अणुक्क० ज० एगस०। चदुसंज०-पुरिस० अणुक्क० ज० अंतोमु०।

प्रमाण और अन्तर्मुहूर्त कहा है तथा उत्कृष्ट काल पूर्व कोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य कहा है। मात्र अनन्तानुबन्धीचतुष्क और स्त्रीवेदकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति सामान्य तिर्यञ्चोंके समान यहाँ भी बन जाती है, इसलिए यहाँ इसका जघन्य काल एक समय कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी प्ररूपणा स्त्रीवेदके समान घटित हो जाती है, इसलिए उसे उसकी प्ररूपणाके समान जानने की सूचना की है।

§ १८. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग इसी प्रकार है। इतनी विशेषता है कि इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तक जीवोंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका एक समय काल कम कर देने पर यहाँ अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल प्राप्त होता है और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंकी कायस्थिति अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है, इसलिए इन जीवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त प्रमाण कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अन्य सब काल इसी प्रकार बन जाता है, इसलिए उसे इसी प्रकार जानने की सूचना की है। मात्र इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उद्वेलना की अपेक्षा एक समय काल भी प्राप्त होता है, इसलिए इनकी उक्त विभक्तिका जघन्य काल अलगसे एक समय कहा है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें यह कालप्ररूपणा अविकल बन जाती है, इसलिए उनमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान जाननेकी सूचना की है।

§ १९ मनुष्यत्रिकमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण है और एक समय कम अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी कायस्थिति-प्रमाण है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क और स्त्रीवेदकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है। तथा चार सज्वलन और पुरुषवेदकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है।

विशेषार्थ—सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका एक समय काल अपनी अपनी जघन्य स्थितिमेंसे कम कर देने पर अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल प्राप्त होता है, इसलिए यहाँ पर अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल सामान्य मनुष्योंमें एक समय कम क्षुल्लक भव ग्रहणप्रमाण और शेष दो प्रकारके मनुष्योंमें एक समय कम अन्तर्मुहूर्तप्रमाण कहा है। इनमें

§ २० देवगदीए देवेसु मिच्छ०-बारसक०-सत्तणोक० उक्क० पदे० जहण्णुक० एग० । अणुक्क० जह० दसवस्ससहस्साणि समऊणाणि, उक्क० तेत्तीसं सागरो० । एवं सम्मत्त-सम्मामि० अणंताणु०चउक्काणं । णवरि अणुक्क० ज० एगस०, उक्क० त चेव । एवं पुरिस-णवुंसयवेदाणं । णवरि अणुक्क० ज० दसवस्ससहस्साणि, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि ।

§ २१ भवण०-वाण०-जोइसि० छव्वीसं पयडीणमुक्क० पदे० जहण्णुक०

इसका उत्कृष्ट काल कायस्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। मात्र इनमें सम्यक्त्वका उद्वेलना और क्षपणाकी अपेक्षा तथा सम्यग्मिथ्यात्वका उद्वेलनाकी अपेक्षा अनन्तानुबन्धीचतुष्कका संयोजना होकर सासादन गुणस्थानके साथ विवक्षित पर्यायमें एक समय रहनेकी अपेक्षा और स्त्रीवेदका उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके बाद एक समय तक अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके साथ विवक्षित पर्यायमें रहनेकी अपेक्षा उक्त प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय बन जाने से वह उक्त प्रमाण कहा है। तथा चार संज्वलन और पुरुषवेदकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त जो आपसे घटित करके बतला आये हैं वह मनुष्यत्रिकमें सम्भव है इसलिए इनमें उक्त प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है।

§ २० देवगतिमें देवोंमें मिथ्यात्व बारह कषाय और सात नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम दस हजार वर्ष है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। इसी प्रकार सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा काल जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल वही है। पुरुषवेद और नपुंसकवेदका काल भी इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल दस हजार वर्ष है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है।

विशेषार्थ—देवोंमें मिथ्यात्व बारह कषाय और सात नोकषायकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति गुणित कर्मांशिक जीवके वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें होती है, इसलिए वहाँ इन प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम दस हजार वर्ष कहा है। उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है यह स्पष्ट ही है। शेष प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल तो वही है। मात्र जघन्य कालमें अन्तर है। सम्यक्त्वका उद्वेलना और क्षपणाकी अपेक्षा सम्यग्मिथ्यात्वका उद्वेलनाकी अपेक्षा और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका संयोजना होकर सासादन गुणस्थानके साथ एक समय विवक्षित पर्यायमें रहनेकी अपेक्षा एक समय काल बन जाता है इसलिए यहाँ इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कहा है। तथा पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति पल्योपमकी स्थितिवाले देवोंके अन्तिम समयमें होती है, इससे कम स्थितिवाले देव नहीं हैं इसलिए तो इसकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल पूरा दस हजार वर्ष कहा है और नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति ऐशान कल्पमें होती है, इसलिए इसकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका भी जघन्य काल पूरा दस हजार वर्ष कहा है।

§ २१ भवनवासी व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट

एगस० । अणुक्क० जह० जहण्णट्ठिदी समऊणा, उक्क० अप्पप्पणो उक्कस्सट्ठिदीओ । णवरि अणंताणु०चउक्क० जह० एगस० । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमणंताणु०-चउक्क०भंगो ।

§ २२. सोहम्मादि जाव सहस्सारो त्ति मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० उक्क० पदे० जहण्णुक्क० एगस० । अणुक्क० जह० सग-सगजहण्णट्ठिदीओ समऊणाओ, उक्क० सग-सगुक्कस्सट्ठिदीओ । अणंताणु०चउक्क०-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं एवं चेव । णवरि अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० तं चेव ।

§ २३. आणदादि जाव णवगेवेज्जा त्ति छव्वीस पयडीण उक्क० पदे०

प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग अनन्तानुबन्धीचतुष्कके समान है ।

विशेषार्थ—उक्त देवोंमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें सम्भव है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण कहा है और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है । मात्र अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय सामान्य देवोंके समान यहाँ भी बन जाता है, इसलिए इसके जघन्य काल एक समयका अलगसे निर्देश किया है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग अनन्तानुबन्धीचतुष्कके समान कहनेका कारण यह है कि यहाँ पर इनका भी उद्वेलनाकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय बन जाता है । शेष कथन स्पष्ट ही है ।

§ २२ सौधर्म कल्पसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें मिथ्यात्व बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । अनन्तानुबन्धीचतुष्क, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग इसी प्रकार है । इतनी विशेषता है कि इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल वही है ।

विशेषार्थ—यहाँ प्रारम्भमें कही गई बाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें होती है । मात्र सौधर्म और ऐशान कल्पमें पुरुषवेद और नपुसकवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति उस पर्यायके अन्तिम समयमें होती है, इसलिए इन सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण कहा है । तथा शेष प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति सामान्य देवोंके समान यहाँ भी घटित हो जाती है, इसलिए इसका जघन्य काल एक समय कहा है । यहाँ सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है ।

§ २३ आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट

जहण्णुक्क० एगस० । अणुक्क० जह० खुद्दाबंधपाठो समऊणो, उक्क० सगट्ठिदी । णवरि अणंताणु०चउक्कस्स अणुक्क० पदे० जह० एगस० । एवं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं ।

§ २४ मणुसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति सत्तावीसं पयडीणमुक्क० पदे० जहण्णुक्क० एगस० अणुक्क० जह० जहण्णट्ठिदी समयूणा, उक्क० सगुक्कस्सट्ठिदी । णवरि अणंताणु० चउक्क० अणुक्क० जह० अंतोमु० । सम्मत्त० उक्क० पदेसजहण्णुक्क० एगस० । अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल क्षुल्लकबन्धके पाठके अनुसार एक समय कम जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है। इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षासे जानना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति अपने अपने भवके प्रथम समयमें सम्भव है। तीनों वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति स्वामित्वके अनुसार यद्यपि भवके प्रथम समयमें सम्भव नहीं है, क्योंकि स्वामित्वप्ररूपणामें गुणितकर्मांशिकविधिसे आकर जो द्रव्यलिंगके साथ मरकर और वहाँ उत्पन्न होकर विवक्षित वेदके पालनकालके अन्तिम समयमें स्थित है उसके तीनों वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति बतलाई है पर क्षुल्लकबन्धके पाठके अनुसार तीनों वेदों सहित उक्त सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण बतलाया है सो विचार कर घटित कर लेना चाहिए। मात्र अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय सामान्य देवोंके समान यहाँ भी बन जाता है, इसलिए वह उक्त प्रमाण कहा है। तथा यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय ही है क्योंकि सम्यक्त्वका उद्वेलना और क्षपणाकी अपेक्षा तथा सम्यग्मिथ्यात्वका उद्वेलनाकी अपेक्षा एक समय काल प्राप्त होनेमें कोई बाधा नहीं आती इसलिए इनकी प्ररूपणा अनन्तानुबन्धीचतुष्कके समान जाननेकी सूचना की है। यहाँ सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है।

§ ५४. मनुष्यसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सत्ताईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके एक समयको अपनी अपनी जघन्य स्थितिमेंसे कम कर देने पर सत्ताईस प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल प्राप्त होता है इसलिए वह एक समय कम जघन्य स्थितिप्रमाण कहा है। मात्र जो वेदकसम्यग्दृष्टि अनन्तानुबन्धीकी

§ २५. जहण्णए पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। तत्थ ओघेण मिच्छत्त-एक्कारसकसाय-णवणोकसाय० जहण्णपदे जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ। अजहण्णे० अणादिओ अपज्जवसिदो अणादिओ सपज्जवसिदो। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जहण्णपदे जहण्णुक्क० एगसमओ। अजह० ज० अंतोमु०, उक्क० वेछावट्ठि सागरोवमाणि सदिरेयाणि। अणंताणु०चउक्क० ज० पदेस० जहण्णुक्क० एगस०। अज० अणादिओ अपज्जवसिदो अणादिओ सपज्जवसिदो सादिओ सपज्जवसिदो। जो सादिओ सपज्जवसिदो तस्स इमो णिद्देसो—जह० अंतोमु०, उक्क० अद्धपोग्गलपरियट्टं देसूणं। लोभसंजल० जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अज० तिण्णि भंगा। जो सादिओ[1] सपज्जवसिदो तस्स जहण्णुक्क० अंतोमुहुत्तं।

विसंयोजना किये विना यहाँ उत्पन्न हुआ है और अन्तर्मुहूर्त कालमें उनकी विसंयोजना कर देता है उसके इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति अन्तर्मुहूर्त काल तक ही देखी जाती है, इसलिए इसका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। क्षपणाकी अपेक्षा सम्यक्त्वकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय यहाँ भी सम्भव होनेसे वह उक्त प्रमाण कहा है। इन सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। इस प्रकार यहाँ तक ओघसे और चारों गतियोंमें कालका विचार किया। आगे अपनी अपनी विशेषताको जानकर वह घटित कर लेना चाहिए।

इस प्रकार उत्कृष्ट काल समाप्त हुआ।

§ २५. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, ग्यारह कषाय और नौ नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अनादि-अनन्त और अनादि-सान्त काल है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल साधिक दो छ्यासठ सागर है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अनादि-अनन्त, अनादि-सान्त और सादि-सान्त काल है। उनमें जो सादि-सान्त काल है उसका यह निर्देश है—जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। लोभसंज्वलनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिके तीन भङ्ग हैं। उनमें जो सादि-सान्त भङ्ग है उसका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ—अपने अपने स्वामित्वके अनुसार ओघ और आदेशसे सब प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति एक समय तक ही होती है, इसलिए उसका जघन्य और उत्कृष्ट काल सर्वत्र एक समय कहा है। अतः यहाँ केवल सब प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके कालका विचार करें गे। मिथ्यात्व आदि इक्कीस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति अपनी अपनी क्षपणाके अन्तिम समयमें होती है, इसलिए इसका काल अभव्यों या अभव्योंके समान भव्योंकी अपेक्षा

---

1 ता० प्रतौ 'जो सो सादियो' इति पाठः।

जहण्णुक्क० एगस०। अणुक्क० जह० खुद्दाभवग्गहणं समऊणं, उक्क० सगट्ठिदी। णवरि अणंताणु० चउक्कस्स अणुक्क० पद० जह० एगस०। एवं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं।

§ २४ अणुदिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति सत्तावीसं पयडीणमुक्क० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अणुक्क० जह० जहण्णट्ठिदी समऊणा, उक्क० सगुक्कस्सट्ठिदी। णवरि अणंताणु०चउक्क० अणुक्क० जह० अंतोमु०। सम्मत्त० उक्क० पदेसमजहण्णुक्क० एगस०। अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल क्षुल्लकभवके पाठके अनुसार एक समय कम जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है। इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षासे जानना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति अपने अपने भवके प्रथम समयमें सम्भव है। तीनों वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति स्वामित्वके अनुसार यद्यपि भवके प्रथम समयमें सम्भव नहीं है, क्योंकि स्वामित्वप्ररूपणामें गुणितकर्मांशविधिसे आकर जो द्रव्यलिंगके साथ मरकर और वहाँ उत्पन्न होकर विवक्षित वेदके परावर्तनके अन्तिम समयमें स्थित है उसके तीनों वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति बतलाई है पर क्षुल्लकभवके पाठके अनुसार तीनों वेदों सहित उक्त सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण बतलाया है सो विचार कर घटित कर लेना चाहिए। मात्र अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय सामान्य देवोंके समान यहाँ भी बन जाता है, इसलिए वह उक्त प्रमाण कहा है। तथा यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय ही है, क्योंकि सम्यक्त्वका उद्वेलना और क्षपणाकी अपेक्षा तथा सम्यग्मिथ्यात्वका उद्वेलनाकी अपेक्षा एक समय काल प्राप्त होनेमें कोई बाधा नहीं आती इसलिए इनकी प्ररूपणा अनन्तानुबन्धीचतुष्कके समान जाननेकी सूचना की है। यहाँ सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है।

§ २४ अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सत्ताईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके एक समयको अपनी अपनी जघन्य स्थितिमेंसे कम कर देने पर सत्ताईस प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल प्राप्त होता है, इसलिए यह एक समय कम जघन्य स्थितिप्रमाण कहा है। मात्र जो वेदकसम्यग्दृष्टि अनन्तानुबन्धीकी

§ २५. जहण्णए पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । तत्थ ओघेण मिच्छत्त-एक्कारसकसाय-णवणोकसाय० जहण्णपदे जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ। अजहण्णे० अणादिओ अपज्जवसिदो अणादिओ सपज्जवसिदो । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जहण्णपदे जहण्णुक्क० एगसमओ। अजह० ज० अंतोमु०, उक्क० वेछावट्ठि सागरोवमाणि सदिरेयाणि । अणंताणु०चउक्क० ज० पदेस० जहण्णुक्क० एगस० । अज० अणादिओ अपज्जवसिदो अणादिओ सपज्जवसिदो सादिओ सपज्जवसिदो । जो सादिओ सपज्जवसिदो तस्स इमो णिद्देसो—जह० अंतोमु०, उक्क० अद्धपोग्गलपरियट्टं देसूणं । लोभसंजल० जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस० । अज० तिण्णि भंगा । जो सादिओ[1] सपज्जवसिदो तस्स जहण्णुक्क० अंतोमुहुत्तं ।

विसंयोजना किये विना वहाँ उत्पन्न हुआ है और अन्तर्मुहूर्त कालमें उनकी विसंयोजना कर देता है उसके इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति अन्तर्मुहूर्त काल तक ही देखी जाती है, इसलिए इसका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। क्षपणाकी अपेक्षा सम्यक्त्वकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय यहाँ भी सम्भव होनेसे वह उक्त प्रमाण कहा है। इन सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। इस प्रकार यहाँ तक ओघसे और चारो गतियोंमें कालका विचार किया। आगे अपनी अपनी विशेषताको जानकर वह घटित कर लेना चाहिए।

इस प्रकार उत्कृष्ट काल समाप्त हुआ।

§ २५. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, ग्यारह कषाय और नौ नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अनादि-अनन्त और अनादि-सान्त काल है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागर है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अनादि-अनन्त, अनादि-सान्त और सादि-सान्त काल है। उनमें जो सादि-सान्त काल है उसका यह निर्देश है—जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। लोभसज्वलनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिके तीन भङ्ग हैं। उनमें जो सादि-सान्त भङ्ग है उसका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ—अपने अपने स्वामित्वके अनुसार ओघ और आदेशसे सब प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति एक समय तक ही होती है, इसलिए उसका जघन्य और उत्कृष्ट काल सर्वत्र एक समय कहा है। अतः यहाँ केवल सब प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके कालका विचार करें गे। मिथ्यात्व आदि इकीस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति अपनी अपनी क्षपणाके अन्तिम समयमे होती है, इसलिए इसका काल अभव्यों या अभव्योंके समान भव्योंकी अपेक्षा

---

१ ता० प्रतौ 'जो सो सादियो' इति पाठः ।

§ २६. आदेसेण णेरइएसु मिच्छत्त-सत्तणोकसाय० जह० पदे० जहण्णुक्क० एगसमओ। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि। सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्काणं जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अज० जह० एगसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरो०। बारसक०-भय-दुगुंछाणं जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अज० ज० दसवस्ससहस्साणि समयूणाणि, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि।

अनादि-अनन्त और इतर भव्योंकी अपेक्षा अनादि-सान्त कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये उद्वेलना प्रकृतियाँ हैं। इनका सत्त्व होकर उद्वेलना द्वारा कमसे कम अन्तर्मुहूर्तमें अभाव हो सकता है और जो प्रारम्भमें, मध्यमें और अन्तमें इनकी उद्वेलना करते हुए दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वके साथ रहता है उसके साधिक दो छयासठ सागर काल तक इनका सत्त्व देखा जाता है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागर कहा है। इनका सत्त्व अनादि-अनन्त और अनादि-सान्त नहीं होता, इसलिए ये दो भङ्ग नहीं कहे हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्क अनादि सत्तावाली होकर भी विसंयोजना प्रकृतियाँ हैं, इसलिए इनके अनादि-अनन्त, अनादि-सान्त और सादि-सान्त ये तीन भङ्ग कहे हैं। तथा सादि-सान्तके कालका निर्देश करते हुए वह जघन्य अन्तर्मुहूर्त कहा है, क्योंकि विसंयोजनाके बाद अन्तर्मुहूर्तके लिए इनकी सत्ता होकर पुनः विसंयोजना हो सकती है। तथा उत्कृष्ट काल कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कहा है, क्योंकि कोई जीव इस कालके प्रारम्भमें और अन्तमें इनकी विसंयोजना करे और मध्यमें न करे यह सम्भव है। लोभकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके भी तीन भङ्ग हैं। अनादि-अनन्त भङ्ग अभव्योंके होता है। अनादि-सान्त भङ्ग भव्योंके जघन्य प्रदेशविभक्तिके पूर्व होता है और सादि-सान्त भङ्ग जघन्य प्रदेशविभक्तिके बादमें होता है। इसकी जघन्य प्रदेशविभक्ति क्षपक जीवके सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयमें होती है। इसके बाद इसका सत्त्व अन्तर्मुहूर्त काल तक ही पाया जाता है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है।

§ २६. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व और सात नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम दस हजार वर्ष है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है।

विशेषार्थ—मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी जघन्य प्रदेशविभक्ति नारक पर्यायमें अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहनेपर हो यह भी सम्भव है और इसके बाद इनकी वहाँ अन्तर्मुहूर्त काल तक अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है। तथा क्षपितकर्मांशविधिसे आकर नरकमें उत्पन्न हुए जिसे अन्तर्मुहूर्त काल हो जाता है उसके पुरुषवेद हास्य रति अरति और शोककी जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है और इसके पूर्व अन्तर्मुहूर्त काल तक अजघन्य प्रदेशविभक्ति रहती है, इसलिए इन सब प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। सम्यक्त्व आदि छह प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय अनुत्कृष्टके समान घटित कर लेना चाहिए। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्ति भवके प्रथम समयमें

§ २७. पढमाए जाव छट्ठि त्ति मिच्छत्त-इत्थि-णवुंसयवेदाणं जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अज० जह० जहण्णट्ठिदी, उक्क० सगुक्कस्सट्ठिदी। सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्काणं जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अज० जह० एगस०, उक्क० सगुक्कस्सट्ठिदीओ। बारसक०-भय-दुगुंछाणं जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अज० जह० जहण्णट्ठिदी समऊणा, उक्क० सगट्ठिदी। पुरिसवेद-हस्स-रदि-अरदि-सोगाणं जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदीओ।

§ २८. सत्तमाए मिच्छत्त-अणंताणु०चउक्क०-इत्थि-पुरिस-णवुंसयवेद--हस्स-रदि-अरदि-सोगाणं जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अज० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि। एवं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताण। णवरि अज० जह० एगस०।

प्राप्त होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम दस हजार वर्ष कहा है। सब अट्ठाईस प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है यह स्पष्ट ही है।

§ २७ प्रथम पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। पुरुषवेद, हास्य, रति, अरति और शोककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है।

विशेषार्थ—प्रथमादि छह पृथिवियोंमें उत्कृष्ट आयुवाले जीवके अन्तिम समयमें मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जघन्य स्वामित्व बतलाया है, इसलिए यहाँ इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण कहा है। सम्यक्त्व आदि छह प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय सामान्य नारकियोंके समान घटित कर लेना चाहिए। आगे भी जहाँ यह काल इतना कहा हो वहाँ वह इसी प्रकार जानना चाहिए। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्ति भवके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इसका जघन्य काल एक समय कम जघन्य स्थितिप्रमाण कहा है। पुरुषवेद आदिकी जघन्य प्रदेशविभक्ति भवके प्रारम्भमें अन्तर्मुहूर्त काल जाने पर होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। इन अट्ठाईस प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है।

§ २८ सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है।

बारसक०-भय-दुगुंछाणं जह० पदे० जहण्णुक० एगस०। अज० जह० बावीसं सागरोवमाणि, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि।

§ ९६ तिरिक्खगदीए तिरिक्खेसु मिच्छत्त०-बारसकसाय-भय-दुगुंछित्थि-णवुंसयवेदाणं जह० पदे० जहण्णुक० एगस०। अज० जह० खुद्दाभवग्गहणं, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जह० पदे० जहण्णुक० एगस०। अज० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि पलिदो० असंखे०-भागेण सादिरेयाणि। अणंताणु०चउक्क० जह० जहण्णुक० एगस०। अज० जह० एगस०, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। पुरिसवेद-हस्स रदि-अरदि-सोगाणं जह० पदे० जहण्णुक० एगस०। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० अणंतकालम०-मसंखे०पो०परियट्टा।

इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है। बारह कषाय भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल बाईस सागर है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है।

विशेषार्थ—सातवीं पृथिवीमें ओघके समान स्वामित्व है, इसलिए यहाँ मिथ्यात्व आदि बारह प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त बन जानेसे वह उक्त कालप्रमाण कहा है। सम्यक्त्वादिकका भङ्ग उक्त प्रकृतियोंके समान है यह स्पष्ट ही है। मात्र इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका उद्वेलनाकी अपेक्षा जघन्य काल एक समय बन जानेसे वह अलगसे कहा है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्ति उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल बाईस सागर कहा है। इन अट्ठाईस प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है यह स्पष्ट ही है।

§ ९६ तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल क्षुल्लक भवग्रहण प्रमाण है और उत्कृष्ट काल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनके बराबर है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तीन पल्य है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनके बराबर है। पुरुषवेद हास्य रति, अरति और शोककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अनन्त काल है, जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनके बराबर है।

विशेषार्थ—तिर्यञ्चोंकी जघन्य भवस्थिति क्षुल्लकभवग्रहणप्रमाण है और जघन्य भवस्थितिवाले जीवोंके मिथ्यात्व आदि प्रथम दण्डकमें कही गई प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति

§ ३०. पंचिंदियतिरिक्खतियम्मि मिच्छत्ति त्थि-णवुंसयवेद-बारसक०-भय-दुगुंछाणं जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस० । अज० जह० खुद्दाभवग्गहणमंतोमुहुत्तं, उक्क० सगट्ठिदी । सम्मत्त-सम्मामि०--अणंताणु०चउक्काणमेवं चेव । णवरि अज० जह० एगस० । पंचणोकसायाणं जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस० । अज० जह० अंतो०, उक्क० सगट्ठिदी ।

§ ३१. पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्ताण मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुंछ० जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस० । अज० जह० खुद्दाभवग्गहणं समयूणं, उक्क० अंतोमु० ।

होती नहीं, इसलिए यहाँ उक्त प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल क्षुल्लकभवग्रहणप्रमाण कहा है। तथा तिर्यञ्चोंकी उत्कृष्ट कायस्थिति अनन्त काल है, इसलिए उक्त प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल अनन्त काल कहा है। यहाँ सम्यक्त्वद्विककी एक समय तक सत्ता उद्वेलनाकी अपेक्षा बन जाती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कहा है। तथा जो पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक इनकी उद्वेलना कर सत्त्व नाश हुए विना तीन पल्यकी आयुवाले तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न होकर और सम्यक्त्वको उत्पन्न कर अन्त तक इनकी सत्ता बनाये रखते हैं उनके इतने काल तक इनकी सत्ता दिखलाई देनेसे यहाँ इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग अधिक तीन पल्य कहा है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय पहले अनेक बार घटित करके बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी घटित कर लेना चाहिए। तथा इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल मिथ्यात्वके समान है यह स्पष्ट ही है। इसी प्रकार पुरुषवेद आदि पाँचकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल जानना चाहिए। तथा इसका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त प्रथम नरकके समान घटित कर लेना चाहिए।

§ ३० पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्व, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल सामान्यसे पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें क्षुल्लकभवग्रहणप्रमाण और शेष दोमें अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी कायस्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग इसी प्रकार है। इतनी विशेषता है कि इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है। पाँच नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है।

विशेषार्थ—यहाँ अन्य सब स्पष्टीकरण सामान्य तिर्यञ्चोंके समान कर लेना चाहिए। केवल दो बातोंमें विशेषता है। एक तो पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्त और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनी जीवोंकी जघन्य भवस्थिति अन्तर्मुहूर्त है, इसलिए इनमें मिथ्यात्व आदिकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। दूसरे इन तीनों प्रकारके तिर्यञ्चोंकी कायस्थिति पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है और इतने काल तक यहाँ अट्ठाईस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति हुए विना भी सत्ता रह सकती है, इसलिए यहाँ इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी कायस्थितिप्रमाण कहा है।

§ ३१. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका

एवं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं। णवरि अज० जह० एगसमओ। सत्तणोक० अज० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अज० जहण्णुक्क० अंतोमु०। एवं मणुसअपज्जत्ताणं।

§ ३२ मणुसतियम्मि मिच्छत्त-बारसक०-णवणोकसायाणं जह० पदे० जहण्णुक्क० एगसमओ। अज० जह० खुद्दाभव० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी। सम्मत्त सम्मामि०-अणंताणु०चउक्काणं जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अज० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदीओ।

जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है। इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है। सात नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ मिथ्यात्व आदि उन्नीस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति भवके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इसका जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लकभवग्रहणप्रमाण कहा है। सम्यक्त्वादिकके अजघन्य प्रदेशसत्त्वका जघन्य काल एक समय उद्वेलनाकी अपेक्षा प्राप्त होता है यह स्पष्ट ही है। तथा सात नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति भवग्रहणके अन्तर्मुहूर्त बाद होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। तथा यहाँ सभी प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है यह स्पष्ट ही है।

§ ३२. मनुष्यत्रिकमें मिथ्यात्व बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल सामान्य मनुष्योंमें क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण और शेष दोमें अन्तर्मुहूर्तप्रमाण तथा तीनोंमें उत्कृष्ट काल अपनी अपनी कायस्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी कायस्थिति प्रमाण है।

विशेषार्थ—सामान्य मनुष्योंकी जघन्य स्थिति क्षुल्लकभवग्रहणप्रमाण शेष दोकी अन्तर्मुहूर्तप्रमाण तथा तीनोंकी उत्कृष्ट कायस्थिति पूर्वकोटि अधिक तीन पल्यप्रमाण होती है, इसलिए इनमें मिथ्यात्व आदि बाईस प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल सामान्य मनुष्योंमें क्षुल्लकभवग्रहणप्रमाण शेष दोमें अन्तर्मुहूर्तप्रमाण और उत्कृष्ट काल तीनोंमें कायस्थितिप्रमाण कहा है, क्योंकि इन तीनों प्रकारके मनुष्योंमें उत्पन्न होनेके समय तद्भवस्थके प्रथम समयमें उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है, इसलिए यहाँ पर इन प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके उक्त कालके प्राप्त होनेमें कोई बाधा नहीं आती। अब रहीं शेष चार प्रकृतियाँ सो इनमेंसे जिन जीवोंने सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलनामें एक समय शेष रहने पर मनुष्य पर्याय प्राप्त की है उनके इन दो प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय बन जाता है। तथा जो मनुष्य अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके मनुष्य पर्यायमें एक समय शेष रहने पर सासादनगुणस्थानको प्राप्त होते हैं उनके इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय बन जाता है इसलिए यहाँ इन चार प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कहा है। यहाँ इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल कायस्थिति-

§ ३३. देवगईए देवेसु मिच्छत्तित्थि-णवुंसयवेदाणं जह० पदे० जहण्णुक्कस्स० एगस० । अज० जह० दसवस्ससहस्साणि, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । एवमणंताणु०-चउक्क०-सम्म० सम्मामिच्छत्ताणं । णवरि अज० जह० एगस० । वारसक०-भय-दुगुंछाणं मिच्छत्तभंगो । पंचणोक० जह० पदे० जहण्णुक० एगस० । अज० जह० अंतोमुहु०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि ।

§ ३४. भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति मिच्छत्तित्थि-णवुंसयवेदाणं जह० पदे० जहण्णुक० एगस० । अज० जह० जहण्णट्ठिदी, उक्क० उक्कस्सट्ठिदी । सम्मत्त०-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्काणं जह० पदेस० जहण्णुक० एगस० । अज० जह० एगस०, उक्क० उक्क०ट्ठिदी । वारसक०-भय-दुगुंछाणं जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस० । अज० जह० जहण्णट्ठिदी समयूणा, उक्क० उक्कस्सट्ठिदी । पंचणोक०

प्रमाण है यह स्पष्ट ही है । मात्र सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना होकर अभाव न हो जाय ऐसा करते हुए उनका सत्त्व बनाये रखना चाहिए ।

§ ३३ देवगतिमें देवोंमें मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल दस हजार वर्ष है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है । इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्क, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके विषयमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है । बारह कषाय, भय और जुगुप्साका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है । पाँच नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है ।

विशेषार्थ—देवोंमें स्वामित्वको देखते हुए मिथ्यात्व, बारह कषाय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, भय और जुगुप्साकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर बन जाता है, इसलिए यह काल उक्त प्रमाण कहा है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी-चतुष्क और पाँच नोकषायोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल भी इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए । मात्र इनके अजघन्य प्रदेशसत्कर्मके जघन्य कालमें अन्तर है, इसलिए वह अलगसे कहा है । उनमेंसे प्रारम्भकी छह प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय तो मनुष्योंके समान यहाँ भी घटित हो जाता है । मात्र पाँच नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति देवोंमें उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्तबाद सम्भव है, इसलिए यहाँ इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है ।

§ ३४ भवनवासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है

जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदीओ।

§ ३५. अणुदिसादि जाव अवराइदो त्ति मिच्छत्त-सम्मामि०-इत्थि-णवुंसयवेदाणं जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अज० ज० जहण्णट्ठिदी, उक्क० उक्कस्सट्ठिदी। सम्मत्त० जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अज० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी। एवमणंताणु०चउक्क०-हस्स-रदि-अरदि-सोगाणं। णवरि अज० जह० अंतोमु०। बारसक०-पुरिस भय-दुगुंछाणं जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अज० जह० जहण्णट्ठिदी समऊणा, उक्क० सगट्ठिदी।

और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। पाँच नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है।

विशेषार्थ—यहाँ बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्ति भवके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है क्योंकि उसका सामान्य देवोंमें स्पष्टीकरण आये हैं। इसी प्रकार यहाँ भी कर लेना चाहिए।

§ ३५. अनुदिशसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्क, हास्य रति, अरति और शोककी अपेक्षा काल जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है। बारह कषाय, पुरुषवेद भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है।

विशेषार्थ—यहाँ मिथ्यात्व आदिकी जघन्य प्रदेशविभक्ति जघन्य आयुवाले जीवोंके भवके प्रथम समयमें सम्भव नहीं है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहा है। कृतकृत्यवेदकके कालमें एक समय शेष रहने पर ऐसा जीव मरकर यहाँ उत्पन्न हो सकता है इसलिए सम्यक्त्वकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कहा है। अनन्तानुबन्धीचतुष्क आदि आठ प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति भवके अन्तर्मुहूर्त बाद प्राप्त होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। बारह कषाय आदिकी जघन्य प्रदेशविभक्ति भवके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण कहा है। इन सब प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है।

§ ३६. सव्वट्ठसिद्धिम्मि मिच्छ०-सम्मामि०-बारसक०-इत्थि-पुरिस-णवुंसय-वेद-भय-दुगुंछाणं जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस० । अज० जह० तेत्तीसं सागरोवमाणि समऊणाणि, उक्क० तेत्तीसं सागरो० । सम्म० जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस० । अज० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । अणंताणु०चउक्क०-हस्स-रदि-अरदि-सोगाणं जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस० । अज० जह० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । एवं जाणिदूण णेदव्व जाव अणाहारि त्ति ।

एवं कालाणुगमो समत्तो ।

❀ अंतरं ।

§ ३७. पइज्जासुत्तमेदं सुगमं ।

❀ मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेससंतकम्मियंतरं जहण्णुक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा ।

---

§ ३६. सर्वार्थसिद्धिमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद, भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम तेतीस सागर है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। सम्यक्त्व प्रकृतिकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। अनन्तानुबन्धीचतुष्क, हास्य, रति, अरति और शोककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। इस प्रकार जान कर अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ मिथ्यात्व आदिकी जघन्य प्रदेशविभक्ति भवके प्रथम समयमें होनेसे इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम तेतीस सागर कहा है। कृतकृत्यवेदकका एक समय काल यहाँ उपलब्ध हो सकता है, इसलिए सम्यक्त्वकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कहा है। तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्क आदि प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्ति यहाँ अन्तर्मुहूर्त काल तक सम्भव है, इसलिए उसका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। सब प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल पूरा तेतीस सागर है यह स्पष्ट ही है। यहाँ तक जो काल कहा है उसे देखकर वह अनाहारक मार्गणातक घटित कर लेना चाहिए, इसलिए उसे इसके समान ले जानेकी सूचना की है।

इस प्रकार कालानुगम समाप्त हुआ।

❀ अन्तर।

§ ३७. यह प्रतिज्ञा सूत्र सुगम है।

❀ मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनके बराबर है।

मह० पदे० मह्ण्णुक्क० एगस०। अज० मह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदीओ।

§ ३४. अणुदिसादि जाव अवराइदो त्ति मिच्छत्त-सम्मामि०-इत्थि-णवुंसय वेदाणं जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अज० ज० जहण्णट्ठिदी, उक्क० उक्कस्सट्ठिदी। सम्मत्त० जह० पदे० जहण्णुक्क० एगस०। अज० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी। एवमणंताणु०चउक्क०-हस्स-रदि-अरदि-सोगाणं। णवरि अज० जह० अंतोमु०। बारसक०-पुरिस भय-दुगुंछाणं जह० पद० जहण्णुक्क० एगस०। अज० जह० जहण्णट्ठिदी समऊणा, उक्क० सगट्ठिदी।

और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। पाँच नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है।

विशेषार्थ—यहाँ बारह कषाय भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्ति भवके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है, क्योंकि इसका सामान्य देवोंमें स्पष्टीकरण आये हैं। उसी प्रकार यहाँ भी कर लेना चाहिए।

§ ३५. अनुदिशसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्क, हास्य, रति, अरति और शोककी अपेक्षा काल जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है। बारह कषाय पुरुषवेद भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है।

विशेषार्थ—यहाँ मिथ्यात्व आदिकी जघन्य प्रदेशविभक्ति जघन्य आयुवाले जीवोंके भवके प्रथम समयमें सम्भव नहीं है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहा है। कृतकृत्यवेदकके कालमें एक समय शेष रहने पर ऐसा जीव मरकर यहाँ उत्पन्न हो सकता है, इसलिए सम्यक्त्वकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कहा है। अनन्तानुबन्धीचतुष्क आदि आठ प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति भवके अन्तर्मुहूर्त बाद प्राप्त होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। बारह कषाय आदि की जघन्य प्रदेशविभक्ति भवके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण कहा है। इन सब प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है।

❀ अंतरं जहण्णयं जाणिदूण णेदव्वं ।

§ ४१. एदस्स सुत्तस्स अत्थो सुगमो, जहण्णपदेसविहत्तियाणं सव्वेसिं पि अंतराभावादो ।

एवमंतरं समत्तं ।

४२. संपहि चुण्णिसुत्तेण देसामासिएण सूइदमत्थमुच्चारणाइरिएण परूविदं वत्तइस्सामो । अपुणरुत्तत्थो चेव किण्ण वुच्चदे ? ण, कत्थ वि चुण्णिसुत्तेण उच्चारणाए भेदो अत्थि त्ति तब्भेदपदुप्पायणदुवारेण पउणरुत्तियाभावादो ।

§ ४३. अंतर दुविह—जहण्णमुक्कस्सयं च । उक्कस्सए पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छत्त-अट्ठक० अट्ठणोक० उक्क० पदेसविहत्तिअंतरं जहण्णुक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । अणुक्क० जहण्णुक्क० एगस० । सम्मत्त०-सम्मामि० उक्क० पदेसविह० णत्थि अंतरं । अणुक्क० पदे० जह० एगस०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । अणंताणु०चउक्क० उक्क० पदे० जहण्णुक्क० अणंत०मसंखे०-पो०परियट्टा । अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० वेछावट्ठिसागरोवमाणि देसूणाणि । पुरिसवेद-चदुसंज० उक्क० पदे० णत्थि अंतर । अणुक्क० पदे० जहण्णुक्क० एगस० ।

❀ जघन्य अन्तरकाल भी जानकर ले जाना चाहिए ।

§ ४१ इस सूत्रका अर्थ सुगम है, क्योंकि सभी जघन्य प्रदेशविभक्तियोंका अन्तरकाल नहीं उपलब्ध होता ।

इस प्रकार अन्तरकाल समाप्त हुआ ।

§ ४२ अब चूर्णिसूत्रके द्वारा देशामर्षकरूपसे सूचित हुए जिस अर्थका उच्चारणाचार्यने कथन किया है उसे बतलाते हैं ।

शंका—अपुनरुक्त अर्थको ही क्यों नहीं कहते ?

समाधान—नहीं, क्योंकि कहीं पर चूर्णिसूत्रसे उच्चारणामें भेद है, इसलिए उस भेदके कथन द्वारा पुनरुक्त दोष नहीं आता । अर्थात् उसके पुनः कथन करने पर भी वह अपुनरुक्तके समान हो जाता है ।

§ ४३. अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व, आठ कषाय और आठ नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनके बराबर है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है । अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनके बराबर है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण है । पुरुषवेद और चार संज्वलनकी उत्कृष्ट प्रदेश-विभक्तिका अन्तरकाल नहीं है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक

§ ३८. गुणिदकम्मंसियस्स अगुणिदकम्मंसियभावमुवगयस्स जहण्णेण उक्कस्सेण वि अणंतेण कालेण विणा पुणो गुणिदभावेण परिणमणसत्तीए अभावादो। जहण्णेण असंखेज्जा लोगा त्ति अंतरं किण्ण परूविदं? ण, तस्सुवदेसस्स अपवाइज्जमाणत्तजाणावणट्ठं तदपरूवणादो।

* एवं सेसाणं कम्माणं णेदव्वं।

§ ३९. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे। तं जहा—अट्ठकसाय-अट्ठणोकसायाणं मिच्छत्तभंगो। अणंताणु० चउक्क० उक्क० पदे० मिच्छत्तभंगो।

* णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं पुरिसवेद-चदुसंजलणाणं च उक्कस्सपदेसविहत्तिअंतरं णत्थि।

§ ४०. कुदो? खवणाए समुप्पण्णत्तादो।

एवमुक्कस्सपदेसविहत्तिअंतरं समत्तं।

---

§ ३८. क्योंकि जो गुणितकर्मांशिक जीव अगुणितकर्मांशिकभावको प्राप्त होता है उसके जघन्य और उत्कृष्ट दोनों प्रकार अनन्त कालके बिना पुनः गुणितकर्मांशिकरूपसे परिणमन करनेकी शक्ति नहीं पाई जाती।

शंका—गुणितकर्मांशिक जीवका जघन्य अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण क्यों नहीं कहा?

समाधान—नहीं, क्योंकि वह उपदेश अपवाइज्जमाण है इस बातका ज्ञान करानेके लिए वह नहीं कहा।

विशेषार्थ—पहले काल प्ररूपणाके समय चूर्णिसूत्रमें अन्य उपदेशके अनुसार मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका जघन्य काल असंख्यात लोकप्रमाण कह आये हैं इसलिए यहाँ यह शंका की गई है कि उसी उपदेशके अनुसार मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका जघन्य काल असंख्यात लोकप्रमाण भी कहना चाहिए था। वीरसेन स्वामीने इस शंकाका जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि वह उपदेश अप्रवर्तमान है यह दिखलाना आवश्यक था इसलिए चूर्णिसूत्रकारने यहाँ उसका निर्देश नहीं किया है।

* इसी प्रकार शेष कर्मोंका अन्तरकाल जानना चाहिए।

§ ३९. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—आठ कषाय और आठ नोकषायोंका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है।

विशेषार्थ—यहाँ पर अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी आठ कषाय और आठ नोकषायोंके साथ परिगणना न करके अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है ऐसा कहा है सो इसका कारण यह है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालमें मिथ्यात्वसे कुछ अन्तर है यह दिखलाना आवश्यक था इसलिए वीरसेन स्वामीने उसका अलगसे निर्देश किया है।

* इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, पुरुषवेद और चार संज्वलनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है।

§ ४०. क्योंकि इनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति क्षपणाके समय उत्पन्न होती है।

इस प्रकार उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल समाप्त हुआ।

❀ अंतरं जहण्णयं जाणिदूण णेदव्वं ।

§ ४१. एदस्स सुत्तस्स अत्थो सुगमो, जहण्णपदेसविहत्तियाणं सव्वेसिं पि अंतराभावादो ।

एवमंतरं समत्तं ।

४२. संपहि चुण्णिसुत्तेण देसामासिएण सूइदमत्थमुच्चारणाइरिएण परूविदं वत्तइस्सामो । अपुणरुत्तत्थो चेव किण्ण वुच्चदे ? ण, कत्थ वि चुण्णिसुत्तेण उच्चारणाए भेदो अत्थि त्ति तब्भेदपदुप्पायणदुवारेण पउणरुत्तियाभावादो ।

§ ४३. अंतर दुविह—जहण्णमुक्कस्सय च । उक्कस्सए पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छत्त-अट्ठक० अट्ठणोक० उक्क० पदेसविहत्तिअंतरं जहण्णुक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । अणुक्क० जहण्णुक्क० एगस० । सम्मत्त०-सम्मामि० उक्क० पदेसविह० णत्थि अंतरं । अणुक्क० पदे० जह० एगस०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । अणंताणु०चउक्क० उक्क० पदे० जहण्णुक्क० अणंत०मसंखे०-पो०परियट्टा । अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० वेछावट्ठिसागरोवमाणि देसूणाणि । पुरिसवेद-चदुसंज० उक्क० पदे० णत्थि अंतर । अणुक्क० पदे० जहण्णुक्क० एगस० ।

❀ जघन्य अन्तरकाल भी जानकर ले जाना चाहिए ।

§ ४१ इस सूत्रका अर्थ सुगम है, क्योंकि सभी जघन्य प्रदेशविभक्तियोंका अन्तरकाल नहीं उपलब्ध होता ।

इस प्रकार अन्तरकाल समाप्त हुआ ।

§ ४२. अब चूर्णिसूत्रके द्वारा देशामर्षकरूपसे सूचित हुए जिस अर्थका उच्चारणाचार्यने कथन किया है उसे बतलाते हैं ।

शंका—अपुनरुक्त अर्थको ही क्यों नहीं कहते ?

समाधान—नहीं, क्योंकि कहीं पर चूर्णिसूत्रसे उच्चारणामें भेद है, इसलिए उस भेदके कथन द्वारा पुनरुक्त दोष नहीं आता । अर्थात् उसके पुनः कथन करने पर भी वह अपुनरुक्तके समान हो जाता है ।

§ ४३ अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व, आठ कषाय और आठ नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनके बराबर है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है । अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनके बराबर है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण है । पुरुषवेद और चार सञ्ज्वलनकी उत्कृष्ट प्रदेश-विभक्तिका अन्तरकाल नहीं है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक

§ ३८ गुणिदकम्मंसियस्स अगुणिदकम्मंसियभावमुवगयस्स जहण्णेण उक्कस्सेण वि अणंतेण कालेण विणा पुणो गुणिदभावेण परिणमणसत्तीए अभावादो। जहण्णेण असंखेज्जा लोगा वि अंतरं किण्ण परूविदं? ण, तस्सुवदेसस्स अपवाइज्जमाणत्तजाणावणट्ठं तदपरूवणादो।

❀ एवं सेसाणं कम्माणं णेदव्वं।

§ ३९. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे। तं जहा—अट्ठकसाय अट्ठणोकसायाणं मिच्छत्तभंगो। अणंताणु०चउक्क० उक्क० पदे० मिच्छत्तभंगो।

❀ णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं पुरिसवेद-चदुसंजलणाणं च उक्कस्सपदेसविहत्तिअंतरं णत्थि।

§ ४०. कुदो? खवयसेढीए समुप्पण्णत्तादो।

एवमुक्कस्सपदेसविहत्तिअंतरं समत्तं।

---

§ ३८. क्योंकि जो गुणितकर्मांशिक जीव अगुणितकर्मांशिकपनेको प्राप्त होता है उसके जघन्य और उत्कृष्ट दानों प्रकार अनन्त कालके बिना पुनः गुणितकर्मांशिकरूपसे परिणमन करनेकी शक्ति नहीं पाई जाती।

शंका—गुणितकर्मांशिक जीवका जघन्य अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण क्यों नहीं कहा?

समाधान—नहीं, क्योंकि वह उपदेश अपवाइज्जमाण है इस बातका ज्ञान कराने के लिए वह नहीं कहा।

विशेषार्थ—पहले काल प्ररूपणाके समय चूर्णिसूत्रमें अन्य उपदेशके अनुसार मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका जघन्य काल असंख्यात लोकप्रमाण कह आये हैं इसलिए यहाँ पर शंका की गई है कि उसी उपदेशके अनुसार मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका जघन्य काल असंख्यात लोकप्रमाण भी कहना चाहिए था। वीरसेन स्वामीने इस शंकाका जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि वह उपदेश अप्रवर्तमान है यह दिखलाना आवश्यक था इसलिए चूर्णिसूत्रकारने यहाँ उसका निर्देश नहीं किया है।

❀ इसी प्रकार शेष कर्मोंका अन्तरकाल जानना चाहिए।

§ ३९ अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—आठ कषाय और आठ नोकषायोंका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है।

विशेषार्थ—यहाँ पर अनन्तानुबन्धीचतुष्क आठ कषाय और आठ नोकषायोंके साथ परिगणना न करके अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है ऐसा कहा है सो उसका कारण यह है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कको अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालमें मिथ्यात्वसे कुछ अन्तर है यह दिखलाना आवश्यक था इसलिए वीरसेन स्वामीने उसका अलगसे निर्देश किया है।

❀ इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, पुरुषवेद और चार संज्वलनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है।

§ ४० क्योंकि इनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति क्षपकश्रेणिमें उत्पन्न होती है।

इस प्रकार उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल समाप्त हुआ।

❀ अंतरं जहण्णयं जाणिदूण णेदव्वं ।

§ ४१. एदस्स सुत्तस्स अत्थो सुगमो, जहण्णपदेसविहत्तियाणं सव्वेसिं पि अंतराभावादो ।

एवमंतरं समत्तं ।

§ ४२. संपहि चुण्णिसुत्तेण देसामासिएण सूइदमत्थमुच्चारणाइरिएण परूविदं वत्तइस्सामो । अपुणरुत्तत्थो चेव किण्ण वुच्चदे ? ण, कत्थ वि चुण्णिसुत्तेण उच्चारणाए भेदो अत्थि त्ति तब्भेदपदुप्पायणदुवारेण पउणरुत्तियाभावादो ।

§ ४३. अतर दुविह—जहण्णमुक्कस्सय च । उक्कस्सए पयद । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छत्त-अट्ठक० अट्ठणोक० उक्क० पदेसविहत्तिअंतरं जहण्णुक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । अणुक्क० जहण्णुक्क० एगस० । सम्मत्त०-सम्मामि० उक्क० पदेसविह० णत्थि अंतरं । अणुक्क० पदे० जह० एगस०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । अणंताणु०चउक्क० उक्क० पदे० जहण्णुक्क० अणत०मसंखे०-पो०परियट्टा । अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० वेछावट्ठिसागरोवमाणि देसूणाणि । पुरिसवेद-चदुसंज० उक्क० पदे० णत्थि अंतर । अणुक्क० पदे० जहण्णुक्क० एगस० ।

❀ जघन्य अन्तरकाल भी जानकर ले जाना चाहिए ।

§ ४१. इस सूत्रका अर्थ सुगम है, क्योंकि सभी जघन्य प्रदेशविभक्तियोंका अन्तरकाल नहीं उपलब्ध होता ।

इस प्रकार अन्तरकाल समाप्त हुआ ।

§ ४२. अब चूर्णिसूत्रके द्वारा देशामर्षकरूपसे सूचित हुए जिस अर्थका उच्चारणाचार्यने कथन किया है उसे बतलाते हैं ।

शंका—अपुनरुक्त अर्थको ही क्यों नहीं कहते ?

समाधान—नहीं, क्योंकि कहीं पर चूर्णिसूत्रसे उच्चारणामें भेद है, इसलिए उस भेदके कथन द्वारा पुनरुक्त दोष नहीं आता । अर्थात् उसके पुनः कथन करने पर भी वह अपुनरुक्तके समान हो जाता है ।

§ ४३. अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व, आठ कषाय और आठ नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनके बराबर है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है । अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनके बराबर है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण है । पुरुषवेद और चार सज्वलनकी उत्कृष्ट प्रदेश-विभक्तिका अन्तरकाल नहीं है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक

§ ४४ आदेसेण णेरइएसु मिच्छ०-बारसक०-भण्णोक० उक्क० पदे० णत्थि अंतरं । अणुक्क० पद० जहण्णुक्क० एगस० । सम्म०-सम्मामि० अणंताणु०चउक्क० उक्क० पदे० णत्थि अंतरं । अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि । इत्थि-पुरिस-णवुंसयवेदाणमुक्कस्साणुक्कस्सपदे० णत्थि अंतरं । एवं सत्तमाए पुढवीए ।

समय है ।

विशेषार्थ—गुणितकर्मांशविधि एक बार समाप्त होकर पुनः उसके प्रारम्भ होनेमें अनन्त काल लगता है, इसलिए यहाँ मिथ्यात्व आदि सत्रह प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल कहा है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तरकाल इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। तथा मिथ्यात्व आदि सत्रह प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति एक समयके लिए होती है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय कहा है। अनन्तानुबन्धीचतुष्क, चार संज्वलन और पुरुषवेदकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर काल एक समय कहनेका यही कारण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये उद्वेलना प्रकृतियाँ हैं इसलिए इनका कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण काल तक सत्त्व न पाया जाय यह सम्भव है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण कहा है। अनन्तानुबन्धीचतुष्क ये विसंयोजना प्रकृतियाँ हैं। इनका सत्त्व अधिकसे अधिक कुछ कम दो छयासठ सागर काल तक नहीं पाया जाता इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्त्व दर्शनमोहकी क्षपणाके समय तथा पुरुषवेद और चार संज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसत्त्व चारित्रमोहकी क्षपणाके समय होता है, इसलिए इनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल न प्राप्त होनेसे उसका निषेध किया है।

§ ४४ आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व बारह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तर काल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। स्त्रीवेद पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—नरकमें गुणितकर्मांश जीवके भवमें अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर मिथ्यात्व आदि बाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। पर वहाँ एक पर्यायमें दो बार सम्भव नहीं है, इसलिए यहाँ उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका निषेध किया है। सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालके निषेधका यही कारण है। तथा सम्यक्त्व और तीनों वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति भवके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका निषेध किया है। अब रहा अनुत्कृष्टका विचार सो मिथ्यात्व आदि बाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति एक समयमें होती है अतः इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय कहा है। सम्यक्त्वादिक उद्वेलना प्रकृतियाँ हैं और अनन्तानुबन्धीचतुष्क विसंयोजना प्रकृतियाँ हैं। यहाँ इनका

§ ४५. पढमाए जाव छट्टि त्ति मिच्छ०-बारसक०-णवणोक० उक्कस्साणुक्कस्सपदे० णत्थि अंतरं। सम्म०-सम्मामि० उक्क० पदे० णत्थि अंतरं। अणुक्क० पदे० जह० एगस०, उक्क० सगसगट्ठिदीओ देसूणाओ। अणंताणु०चउक्क० उक्क० पदे० णत्थि अंतरं। अणुक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा।

§ ४६. तिरिक्खगदीए तिरिक्खेसु मिच्छ०-बारसक०-अट्ठणोक० उक्कस्साणुक्कस्सपदे० णत्थि अंतरं। सम्म०-सम्मामि० ओघ। अणंताणु०चउक्क० उक्क० णत्थि अंतरं। अणुक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि देसूणाणि। इत्थिवेद०

सत्त्व कमसे कम एक समय और अधिकसे अधिक कुछ कम तेतीस सागर तक न हो यह सम्भव है, अतः यहाँ इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर कहा है। मात्र सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति मध्यमें होती है, इसलिए भी इसकी अनुत्कृष्ट प्रदेविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हो जाता है और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसयोजना एक समयके लिए नहीं होती, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षासे ही प्राप्त करना चाहिए। तीनों वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति भवके प्रथम समयमें होती है, इसलिए यहाँ इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका भी निषेध किया है। यह सब अन्तर प्ररूपणा सातवें नरकमें अविकल बन जाती है, इसलिए वहाँ सामान्य नारकियोंके समान जाननेकी सूचना की है।

§ ४५. प्रथमसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है।

विशेषार्थ—यहाँ मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति भवके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल न प्राप्त होनेसे उसका निषेध किया है। मात्र विसंयोजनाकी अपेक्षा अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण बन जाता है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकालका अलगसे विधान किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म एकबार ही प्राप्त होता है, इसलिए इसके अन्तरकालका निषेध किया है। तथा यह आयुमें अन्तर्मुहूर्त जाने पर प्राप्त होता है और ये उद्वेलना प्रकृतियाँ हैं, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय कहा है और उद्वेलना प्रकृतियाँ होनेसे वहाँ इनका कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण काल तक सत्त्व न रहे यह सम्भव है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है।

§ ४६ तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और आठ नोकषायोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग ओघके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट

उक्क० णत्थि अंतरं । अणुक्क० जहण्णुक्क० एगस० । एवं पंचिंदियतिरिक्खतियस्स । णवरि सम्म०-सम्मामि० उक्क० णत्थि अंतरं । अणुक्क० ज० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० अट्ठावीस पयडीणमुक्कस्साणुक्क० णत्थि अंतरं ।

§ ४७ मणुसगदीए मणुस्सेसु मिच्छ०-अट्ठकसाय णवुंस० हस्स रदि-अरदि सोग-भय दुगुंछाणं उक्कस्साणुक्कस्स णत्थि अंतरं । सम्म -सम्मामि०-अणंताणु०-चउक्क० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । चदुसंजल० पुरिस०-इत्थिवेद० उक्क० णत्थि अंतरं । अणुक्क० जहण्णुक्क० एगस० । एवं मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु । मणुसअपज्ज० पंचिंदिय

प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है।

विशेषार्थ—यहाँ प्रथम दण्डकमें कही गई प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका निषेध किया है। ओघमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अन्तरकालका जो भङ्ग कहा है वह यहाँ अविकल बन जाता है, इसलिए इसे ओघके समान जाननेकी सूचना की है। अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल सम्भव नहीं है यह गुणितकर्मांशविधिके देखनेसे स्पष्ट हो जाता है। पर ये विसंयोजना प्रकृतियाँ हैं, इसलिए यहाँ इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य कहा है। यहाँ स्त्रीवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसत्त्व भोगभूमिमें पल्यका असंख्यातवाँ भागप्रमाण काल जाने पर होता है, इसलिए इसकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय कहा है। इसकी उत्कृष्ट प्रदेश-विभक्तिका अन्तरकाल नहीं है यह स्पष्ट ही है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें यह अन्तरप्ररूपणा घटित हो जाती है, इसलिए इनमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र इन तिर्यञ्चोंकी कायस्थिति पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्यप्रमाण है, इसलिए इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण प्राप्त होने यहाँ इनकी अपेक्षा अन्तरकालका अलगसे निर्देश किया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति भवके प्रथम समयमें प्राप्त होती है, इसलिए यहाँ उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेश-विभक्तिका अन्तरकाल सम्भव न होनेसे उसका निषेध किया है।

§ ४७ मनुष्यगतिमें मनुष्योंमें मिथ्यात्व आठ कषाय, नपुंसकवेद हास्य, रति, अरति, शोक, भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। चार संज्वलन पुरुषवेद और स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेश-विभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियों-

तिरिक्खअपज्जत्तभंगो ।

§ ४८. देवगदीए देवेसु मिच्छ०-बारसक०-णवणोक० उक्क० अणुक्क० णत्थि अंतरं । सम्म०-सम्मामि० उक्क० णत्थि अंतरं । अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि । अणंताणु०चउक्क० उक्क० णत्थि अंतरं । अणुक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० एक्कत्तीसं साग० देसूणाणि । एवं भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति । णवरि सगट्ठिदीओ भाणिदव्वाओ । अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति अट्ठावीसं पयडीणमुक्कस्साणुक्कस्स० णत्थि अंतरं । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

में जानना चाहिए । मनुष्य अपर्याप्तकोंमे पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है ।

विशेषार्थ—यहाँ प्रथम दण्डकमे कही गई प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति भवके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका निषेध किया है । सम्यक्त्व आदि छह प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है यह स्पष्ट ही है, क्योंकि एक तो इनकी भी उत्कृष्ट कायस्थिति पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य है । दूसरे इनमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य ही प्राप्त होता है, इसलिए पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान यहाँ भी अन्तरकाल बन जाता है । चार संज्वलन आदिकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति क्षपकश्रेणिमें एक समयके लिए और चूर्णिसूत्रके अनुसार स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति भोगभूमिमें पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल जाने पर प्राप्त होती है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय प्राप्त होनेसे वह उक्त कालप्रमाण कहा है । इनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तर काल सम्भव नहीं है यह स्पष्ट ही है । मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें अन्तरकालप्ररूपणा सामान्य मनुष्योंके समान बन जाती है, इसलिए इनमें उनके समान जाननेकी सूचना की है । तथा स्वामित्व और कायस्थिति आदि की अपेक्षा पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंसे मनुष्य अपर्याप्तकोंमें कोई अन्तर नहीं है, इसलिए यहाँ मनुष्य अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान जाननेकी सूचना की है ।

§ ४८ देवगतिमें देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है । इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि कुछ कम इकतीस सागरके स्थानमें कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति कहनी चाहिए । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है । इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए ।

विशेषार्थ—देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है यह तो स्पष्ट ही है । अब रहा अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका विचार सो देवोंमें मिथ्यात्व आदि बाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति भवके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका निषेध किया है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये उद्वेलना

उक्क० णत्थि अंतरं। अणुक्क० अहण्णुक्क० एगस०। एवं पंचिंदियतिरिक्खतियस्स। णवरि सम्म०-सम्मामि० उक्क० णत्थि अंतरं। अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० अट्ठावीसं पयडीणमुक्कस्साणुक्क० णत्थि अंतरं।

§ ४७ मणुसगदीए मणुस्सेसु मिच्छ०-अट्ठकसाय णवुंस० हस्स रदि-अरदि सोग-भय दुगुंछाणं उक्कस्साणुक्कस्स णत्थि अंतरं। सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु० चउक्क पंचिंदियतिरिक्खभंगो। चदुसंजल० पुरिस०-इत्थिवेद० उक्क० णत्थि अंतरं। अणुक्क० जहण्णुक्क० एगस०। एवं मणुसपज्जत्त-मणुसिणीणं। मणुसअपज्ज० पंचिंदिय

प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है।

विशेषार्थ—यहाँ प्रथम दण्डकमें कही गई प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति क्षपक होनेके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका निषेध किया है। ओघमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अन्तरकालका जो मात्र कहा है वह यहाँ अविकल बन जाता है, इसलिए उसे ओघके समान जाननेकी सूचना की है। अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल सम्भव नहीं है यह गुणितकर्मांशविधिके देखनेसे स्पष्ट हो जाता है। पर ये विसंयोजना प्रकृतियाँ हैं, इसलिए यहाँ इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य कहा है। यहाँ स्त्रीवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसत्त्व भोगभूमिमें पल्यका असंख्यातवाँ भागप्रमाण काल जाने पर होता है, इसलिए इसकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय कहा है। इसकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है यह स्पष्ट ही है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें यह अन्तरप्ररूपणा घटित हो जाती है, इसलिए उनमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र इन तिर्यञ्चोंकी कायस्थिति पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्यप्रमाण है इसलिए इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण प्राप्त होने यहाँ इसकी अपेक्षा अन्तरकालका अलगसे निर्देश किया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति भवके प्रथम समयमें प्राप्त होती है, इसलिए यहाँ उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल सम्भव न होनेसे उसका निषेध किया है।

§ ४७ मनुष्यगतिमें मनुष्योंमें मिथ्यात्व, आठ कषाय, नपुंसकवेद हास्य, रति, अरति, शोक, भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। चार संज्वलन, पुरुषवेद और स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियों-

जहण्ण० णत्थि अंतर। सम्म०-सम्मामि० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अणंताणु०चउक्क० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० अंतोमु०, उक्क तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। एवं सत्तमाए पुढवीए।

§ ५१. पढमाए जाव छट्टि त्ति मिच्छ०-बारसक०-इत्थि-णवुंस०-भय-दुगुंछ० जहण्णाजहण्ण० णत्थि अंतरं। सम्मत्त०-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क० जह० णत्थि अंतरं। अज० ज० एगस० अंतोमु०, उक्क० सग-सगट्ठिदीओ[1] देसूणाओ। पंच-णोक० जह० णत्थि अंतर। अज० जहण्णुक्क० एगस०।

अन्तरकाल एक समय है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य प्रदेश-विभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—नरक आदि चारों गतियोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति क्षपित कर्मांशिक जीवके होनेके कारण प्रत्येकमें दो बार सम्भव नहीं है, इसलिए सर्वत्र इसके अन्तर-कालका निषेध किया है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिके अन्तर कालका विचार करने पर नारकियोंमें मिथ्यात्व आदि आठ प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति वहा उत्पन्न होनेके बाद अन्तर्मुहूर्त काल जाने पर सम्भव है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय कहा है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व ये दो उद्वेलना प्रकृतियाँ हैं और अनन्तानुबन्धीचतुष्क विसंयोजना प्रकृतियाँ हैं इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल बन जानेसे उसका अलगसे निर्देश किया है। इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके दोनों प्रकारके अन्तरकालको आगे भी इसी आधारसे घटित कर लेना चाहिए। मात्र सर्वत्र जघन्य अन्तरकाल तो एक समान है। उत्कृष्ट अन्तर काल कुछ कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण प्राप्त होता है। केवल अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा तिर्यञ्चों और मनुष्योंमें वह कुछ कम तीन पल्य ही कहना चाहिए। यहाँ बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्ति भवके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका भी निषेध किया है। सातवीं पृथिवीमें यह प्ररूपणा अविकल बन जाती है, इसलिए उनमें सामान्य नारकियोंके समान जाननेकी सूचना की है।

§ ५१ प्रथमसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर क्रमसे एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। पाँच नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है।

विशेषार्थ—प्रथमादि छह पृथिवियोंमें मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी नरकसे

---

1. आ०प्रतौ 'उक्क० सगट्ठिदीओ' इति पाठः।

§ ४९. जहण्णए पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-एक्कारसक०-णवणोक० जहण्णाजहण्णपदे० णत्थि अंतरं। सम्म०-सम्मामि० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० एगस०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। अणंताणु० चउक्क० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० बेछावट्ठिसागरो० देसूणाणि। लोभसंज० ज० णत्थि अंतरं। अज० जहण्णुक्क० एगसमओ।

§ ५०. आदेसेण णेरइएसु मिच्छ०-तिण्णिवेद० हस्स-रदि-अरदि-सोगाणं जह० णत्थि अंतरं। अज० जहण्णुक्क० एगस०। बारसक०-भय-दुगुंछा० जहण्णा-

---

प्रकृतियाँ हैं। इनका कमसे कम एक समय तक और अधिक से अधिक कुछ कम इकतीस सागर तक सत्त्व नहीं पाया जाता। तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्क विसंयोजना प्रकृतियाँ हैं, इसलिए इनका कमसे कम अन्तर्मुहूर्त तक और अधिकसे अधिक कुछ कम इकतीस सागर काल तक सत्त्व नहीं पाया जाता इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें यह अन्तर प्ररूपणा बन जाती है, इसलिए उनमें सामान्य देवोंके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र इनकी भवस्थिति अलग अलग है, इसलिए इनमें कुछ कम इकतीस सागरके स्थानमें कुछ कम अपनी अपनी भवस्थिति ग्रहण करनेकी सूचना की है। अनुदिशसे लेकर आगेके सब देवोंमें भवके प्रथम समयमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है इसलिए इनमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका निषेध किया है। यह जो अन्तरप्ररूपणा कही है इसे ध्यानमें रखकर आगेकी मार्गणाओंमें यह घटित की जा सकती है, इसलिए उनमें इसी प्रकार से जाननेकी सूचना की है।

इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तरकाल समाप्त हुआ।

§ ४९. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व ग्यारह कषाय और नौ नोकषायोंकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण है। लोभसंज्वलनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है।

विशेषार्थ—ओघसे मिथ्यात्व आदि छब्बीस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति अपनी अपनी क्षपणाके समय योग्य स्थानमें होती है, इसलिए इनकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका निषेध किया है। मात्र सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व उद्वेलना प्रकृतियाँ हैं और अनन्तानुबन्धीचतुष्क विसंयोजना प्रकृतियाँ हैं, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल बन जानेसे उसका अलगसे उल्लेख किया है। तथा लोभसंज्वलनकी जघन्य प्रदेशविभक्ति एक समय तक होनेके बाद भी अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है, इसलिए इसकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय कहा है।

§ ५०. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व तीन वेद हास्य रति अरति और शोककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट

जहण्ण० णत्थि अंतर। सम्म०-सम्मामि० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अणंताणु०चउक्क० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० अंतोमु०, उक्क तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। एवं सत्तमाए पुढवीए।

§ ५१. पढमाए जाव छट्ठि त्ति मिच्छ०-बारसक०-इत्थि-णवुंस०-भय-दुगुंछ० जहण्णाजहण्ण० णत्थि अंतरं। सम्मत्त०-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क० जह० णत्थि अंतरं। अज० ज० एगस० अंतोमु०, उक्क० सग-सगट्ठिदीओ[1] देसूणाओ। पंच-णोक० जह० णत्थि अंतरं। अज० जहण्णुक्क० एगस०।

अन्तरकाल एक समय है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य प्रदेश-विभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—नरक आदि चारो गतियोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति क्षपित कर्मांशिक जीवके होनेके कारण प्रत्येकमे दो बार सम्भव नहीं है, इसलिए सर्वत्र इसके अन्तर-कालका निषेध किया है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिके अन्तर कालका विचार करने पर नारकियोंमें मिथ्यात्व आदि आठ प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति वहा उत्पन्न होनेके बाद अन्तर्मुहूर्त काल जाने पर सम्भव है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय कहा है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व ये दो उद्वेलना प्रकृतियाँ हैं और अनन्तानुबन्धीचतुष्क विसंयोजना प्रकृतियाँ हैं. इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल बन जानेसे उसका अलगसे निर्देश किया है। इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके दोनों प्रकारके अन्तरकालको आगे भी इसी आधारसे घटित कर लेना चाहिए। मात्र सर्वत्र जघन्य अन्तरकाल तो एक समान है। उत्कृष्ट अन्तर काल कुछ कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण प्राप्त होता है। केवल अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा तिर्यञ्चों और मनुष्योंमें वह कुछ कम तीन पल्य ही कहना चाहिए। यहाँ बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्ति भवके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका भी निषेध किया है। सातवीं पृथिवीमें यह प्ररूपणा अविकल बन जाती है, इसलिए उनमें सामान्य नारकियोंके समान जाननेकी सूचना की है।

§ ५१ प्रथमसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर क्रमसे एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। पाँच नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है।

विशेषार्थ—प्रथमादि छह पृथिवियोंमें मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी नरकसे

---

१. आ०प्रतौ 'उक्क० सगट्ठिदीओ' इति पाठः।

§ ५२ तिरिक्खगदीए तिरिक्खेसु मिच्छ०-बारसक०-इत्थि-णवुंस०-भय-दुगुंछाणं जहण्णाजहण्ण० णत्थि अंतरं। सम्म०-सम्मामि० ओघं। अणंताणु०चउक्क० जह० णत्थि अंतरं। अज० ज० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। पंचणोक० जह० णत्थि अंतरं। अज० जहण्णुक्क० एगस०। एवं पंचिंदियतिरिक्खतियस्स। णवरि सम्म०-सम्मामि० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छ० सम्म०-सम्मामि० सोलसक०-भय-दुगुंछा० जहण्णाजहण्ण० णत्थि अंतरं। सत्तणोक० जह० णत्थि अंतरं। अज० जहण्णुक्क० एगस०।

निकलनेके अन्तिम समयमें और शेष की नरकमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके अन्तर कालका निषेध किया है। तथा शेष पाँच नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका स्वामी सामान्य नारकियोंके समान है, इसलिए यहाँ इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय सम्भव होनेसे वह उक्त कालप्रमाण कहा है।

§ ५२ तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय स्त्रीवेद नपुंसकवेद भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग ओघके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। पाँच नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। सात नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है।

विशेषार्थ—तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जघन्य प्रदेशसत्कर्म तीन पल्यकी आयुके अन्तिम समयमें सम्भव है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साका जघन्य प्रदेशसत्कर्म तिर्यञ्च पर्याय प्राप्त करनेके प्रथम समयमें सम्भव है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका निषेध किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग ओघके समान यहाँ भी घटित हो जाता है, इसलिए इनका भङ्ग ओघके समान जाननेकी सूचना की है। अनन्तानुबन्धीचतुष्क विसंयोजना प्रकृतियाँ हैं। इनका सत्त्व कमसे कम अन्तर्मुहूर्त कालतक और अधिकसे अधिक कुछ कम तीन पल्य कालतक न रहे यह सम्भव है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य कहा है। पाँच नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद प्रतिपक्ष प्रकृतियोंके बन्धके अन्तिम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय कहा है। पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिकमें यह अन्तरकाल इसी प्रकार बन जाता

§ ५३. मणुस-मणुसपज्जत्तएसु[1] मिच्छ०-एक्कारसक०-णवणोक० जहण्णाजहण्ण० णत्थि अंतरं। सम्म०-सम्मामि० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि। अणंताणु०चउक्क० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। लोभसंज० जह० णत्थि अंतरं। अज० जहण्णुक्क० एगस०। एवं मणुस्सिणीणं। णवरि पुरिसवेद० लोभसंजलणभंगो। मणुसअपज्जत्ताणं पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो।

है, उसे सामान्य तिर्यञ्चोंके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके उत्कृष्ट अन्तरकालमें कुछ विशेपता है, इसलिए इनके अन्तरकालका निर्देश अलगसे किया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्ति उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका निषेध किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना होनेके बाद यहाँ पुनः इनका सत्त्व सम्भव नहीं है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका निषेध किया है। तथा शेप सात नोकपायोकी जघन्य प्रदेशविभक्ति उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद प्रतिपक्ष प्रकृतियोका बन्ध होनेके अन्तिम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय कहा है।

§ ५३ मनुष्य और मनुष्य पर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, ग्यारह कषाय और नौ नोकपायोंकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। लोभ संज्वलनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। इसी प्रकार मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेपता है कि इनमें पुरुषवेदका भङ्ग लोभसंज्वलनके समान है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है।

विशेषार्थ—सामान्य मनुष्य आदि तीनों प्रकारके मनुष्योंमें मिथ्यात्व, ग्यारह कपाय और नौ नोकपायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति अपनी अपनी क्षपणाके अन्तिम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल सम्भव न होनेसे उसका निषेध किया है। मात्र मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदकी जघन्य प्रदेशविभक्ति अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें होती है, इसलिए यहाँ इसकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय सम्भव होनेसे वह उक्तप्रमाण कहा है। उक्त तीनों प्रकारके मनुष्योंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य उद्वेलनाकी अपेक्षा बन जाता है, इसलिए वह उक्तप्रमाण कहा है। तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य विसंयोजनाकी अपेक्षा बन जाता है, इसलिए वह उक्त प्रमाण कहा है। तथा संज्वलन लोभकी जघन्य प्रदेशविभक्ति यहाँ क्षपणाके अन्तर्मुहूर्त पूर्व होती है, इसलिए इसकी अजघन्य

---

१ आ०प्रतौ 'मणुसअपज्जत्तएसु' इति पाठ।

§ ५२ तिरिक्खगदीए तिरिक्खेसु मिच्छ०-बारसक०-इत्थि-णवुंस०-भय-दुगुंछाणं जहण्णाजहण्ण० णत्थि अंतरं। सम्म०-सम्मामि० ओघं। अणंताणु०चउक्क० जह० णत्थि अंतरं। अज० ज० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। पंचणोक० जह० णत्थि अंतरं। अज० जहण्णुक्क० एगस०। एवं पंचिंदियतिरिक्खतियस्स। णवरि सम्म०-सम्मामि० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छ० सम्म०-सम्मामि० सोलसक०-भय-दुगुंछा० जहण्णाजहण्ण० णत्थि अंतरं। सत्तणोक० जह० णत्थि अंतरं। अज० जहण्णुक्क० एगस०।

निकलनेके अन्तिम समयमें और शेष की नरकमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके अन्तर कालका निषेध किया है। तथा शेष पाँच नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका स्वामी सामान्य नारकियोंके समान है, इसलिए यहाँ इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय सम्भव होनेसे वह उक्त कालप्रमाण कहा है।

§ ५२ तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय स्त्रीवेद नपुंसकवेद भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग ओघके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। पाँच नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। सात नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है।

विशेषार्थ—तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जघन्य प्रदेशसत्कर्म तीन पल्यकी आयुके अन्तिम समयमें सम्भव है। बारह कषाय भय और जुगुप्साका जघन्य प्रदेशसत्कर्म तिर्यञ्च पर्याय ग्रहण करनेके प्रथम समयमें सम्भव है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका निषेध किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग ओघके समान यहाँ भी घटित हो जाता है, इसलिए इनका भङ्ग ओघके समान जाननेकी सूचना की है। अनन्तानुबन्धी-चतुष्क विसंयोजना प्रकृतियाँ हैं। इनका सत्त्व कमसे कम अन्तर्मुहूर्त कालतक और अधिकसे अधिक कुछ कम तीन पल्य कालतक न रहे यह सम्भव है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य कहा है। पाँच नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद प्रतिपक्ष प्रकृतियोंके बन्धके अन्तिम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय कहा है। पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिकमें यह अन्तरकाल इसी प्रकार बन जाता

§ ५३. मणुस-मणुसपज्जत्तएसु[1] मिच्छ०-एक्कारसक०-णवणोक० जहण्णाजहण्ण० णत्थि अंतरं। सम्म०-सम्मामि० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि। अणंताणु०चउक्क० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। लोभसंज० जह० णत्थि अंतरं। अज० जहण्णुक्क० एगस०। एवं मणुस्सिणीसु। णवरि पुरिसवेद० लोभसंजलणभंगो। मणुसअपज्जत्ताणं पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो।

है, उसे सामान्य तिर्यञ्चोंके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके उत्कृष्ट अन्तरकालमें कुछ विशेषता है, इसलिए इनके अन्तरकालका निर्देश अलगसे किया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्ति उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका निषेध किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना होनेके बाद यहाँ पुनः इनका सत्त्व सम्भव नहीं है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका निषेध किया है। तथा शेष सात नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद प्रतिपक्ष प्रकृतियोंका बन्ध होनेके अन्तिम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय कहा है।

§ ५३ मनुष्य और मनुष्य पर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, ग्यारह कषाय और नौ नोकषायोंकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। लोभ सज्वलनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। इसी प्रकार मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें पुरुषवेदका भङ्ग लोभ-सज्वलनके समान है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है।

विशेषार्थ—सामान्य मनुष्य आदि तीनों प्रकारके मनुष्योंमें मिथ्यात्व, ग्यारह कषाय और नौ नोकषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति अपनी अपनी क्षपणाके अन्तिम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल सम्भव न होनेसे उसका निषेध किया है। मात्र मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदकी जघन्य प्रदेशविभक्ति अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें होती है, इसलिए यहाँ इसकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय सम्भव होनेसे वह उक्तप्रमाण कहा है। उक्त तीनों प्रकारके मनुष्योंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य उद्वेलनाकी अपेक्षा बन जाता है, इसलिए वह उक्तप्रमाण कहा है। तथा अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य विसयोजनाकी अपेक्षा बन जाता है, इसलिए वह उक्त प्रमाण कहा है। तथा सज्वलन लोभकी जघन्य प्रदेशविभक्ति यहाँ क्षपणाके अन्तर्मुहूर्त पूर्व होती है, इसलिए इसकी अजघन्य

---

१ आ॰प्रतौ 'मणुसअपज्जत्तएसु' इति पाठः।

§ ५४ देवगदीए देवेसु मिच्छ०-बारसक०-इत्थि०-णवुंस० भय-दुगुंछा० जहण्णाजहण्ण० णत्थि अंतरं। सम्म०-सम्मामि० ज० णत्थि अंतरं। अज० ज० एगस०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अणंताणु०चउक्क० ज० णत्थि अंतरं। अज० ज० अंतोमु०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि। पुरिसवेद-हस्स-रदि-अरदि-सोग० ज० णत्थि अंतरं। अज० जहण्णुक्क० एगस०।

§ ५५ भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति मिच्छ०-बारसक०-इत्थि०-णवुंस०-भय-दुगुंछा० जहण्णाजहण्ण० णत्थि अंतरं। सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु० चउक्क० ज० णत्थि अंतरं। अज० ज० एगस० अंतोमु०, उक्क० सग-सगट्ठिदीओ देसूणाओ।

प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय कहा है। मनुष्य अपर्याप्तकोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है यह स्पष्ट ही है।

§ ५४ देवगतिमें देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। पुरुषवेद, हास्य, रति, अरति और शोककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तर नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर काल एक समय है।

विशेषार्थ—देवोंमें मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी जघन्य प्रदेशविभक्ति भवके अन्तिम समयमें तथा बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्ति भवग्रहणके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालका निषेध किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना होकर पुनः सत्त्व तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना होकर पुनः सत्त्व अन्तिम ग्रैवेयक तक ही सम्भव है। आगे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना नहीं होती और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना तो होती है पर इन जीवोंका नीचे गिरना सम्भव नहीं होनेसे पुनः सत्त्व नहीं होता इसलिए इन सब प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर कहा है। इनमेंसे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है यह स्पष्ट ही है। यहाँ पुरुषवेद आदिकी जघन्य प्रदेशविभक्ति भवके प्रारम्भमें अन्तर्मुहूर्त काल जाने पर प्रतिपक्ष प्रकृतिका बन्धक अन्तिम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय सम्भव होनेसे वह उक्त काल प्रमाण कहा है।

§ ५५. भवनवासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर क्रमसे एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा

पुरिसवेद-हस्स-रदि-अरदि-सोगाणं जह० णत्थि अंतर। अज० जहण्णुक्क० एगस०।

§ ५६. अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति अट्ठावीस पयडीणं जहण्णाजहण्ण० णत्थि अंतर। णवरि हस्स-रदि-अरदि-सोगाणमाणदभंगो। एवं जाव अणाहारए त्ति णीदे अंतरं समत्तं होदि।

❀ णाणाजीवेहि भंगविचओ दुविहो—जहण्णुक्कस्सभेदेहि। अट्ठपदं कादूण सव्वकम्माणं णेदव्वो।

§ ५७. एदस्स सुत्तस्स देसामासियस्स उच्चारणाइरियवक्खाणं परूवेमो। णाणाजीवेहि भंगविचओ दुविहो—जहण्णओ उक्कस्सओ चेदि। उक्कस्सए पयदं। तत्थ अट्ठपदं—अट्ठावीसं पयडीणं जे उक्कस्सपदेसस्स विहत्तिया ते अणुक्कस्सपदेसस्स अविहत्तिया। जे अणुक्कस्सपदेसस्स विहत्तिया ते उक्कस्सपदेसस्स अविहत्तिया। विहत्तिएहि पयदं, अविहत्तिएहि अव्ववहारो। एदेण

उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। पुरुषवेद, हास्य, रति, अरति और शोककी जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है।

विशेषार्थ—सामान्य देवोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालको जिसप्रकार घटित करके बतला आये हैं उसी प्रकार यहां पर भी घटित कर लेना चाहिए।

§ ५६. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। इतनी विशेषता है कि हास्य, रति, अरति और शोक प्रकृतिका भङ्ग आनत कल्पके समान है। इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जानेपर अन्तरकाल समाप्त होता है।

विशेषार्थ—मिथ्यात्व आदि कुछ प्रकृतियोंकी भवके अन्तिम समयमें और कुछकी भवके प्रथम समयमें जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल सम्भव नहीं होनेसे उसका निषेध किया है। मात्र हास्य आदि चार प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति पर्यायग्रहणके अन्तर्मुहूर्त बाद होती है, इसलिए इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय प्राप्त होनेसे वह उक्त कालप्रमाण कहा है।

इस प्रकार अन्तरकाल समाप्त हुआ।

❀ नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्टके भेदसे भङ्गविचय दो प्रकारका है। सो इस विषयमें अर्थपद करके सब कर्मोंका ले जाना चाहिए।

§ ५७. यह सूत्र देशामर्षक है। इसके उच्चारणाचार्य कृत व्याख्यानका कथन करते हैं—नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसमें यह अर्थपद है—जो अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव हैं वे उनकी अनुत्कृष्ट प्रदेश अविभक्तिवाले हैं। तथा जो अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव हैं वे उत्कृष्ट प्रदेश अविभक्तिवाले हैं। यहां विभक्तिवाले जीवोंका प्रकरण है, क्योंकि अविभक्तिवालोंका व्यवहार नहीं

अट्ठपदेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण। तत्थ ओघेण अट्ठावीसं पयडीणं उक्कस्सपदेसस्स सिया सव्वे जीवा अविहत्तिया १, सिया अविहत्तिया च विहत्तिओ च २, सिया अविहत्तिया विहत्तिया च ३। अणुक्कस्सपदेसस्स सिया सव्वे जीवा विहत्तिया १, सिया विहत्तिया च अविहत्तिओ च २, सिया विहत्तिया च अविहत्तिया च ३। एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-मणुसतिय-सव्वदेवे त्ति। मणुसअपज्ज० अट्ठावीसं पयडीणं उक्कस्सपदेसविहत्तियाणं अविहत्तिएहि सह अट्ठ भंगा। अणुक्कस्सपदेसविहत्तियाणं पि अविहत्तिएहि सह अट्ठ भंगा वत्तव्वा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

६। इस अर्थपदके अनुसार निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे कदाचित् सब जीव अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेश-अविभक्तिवाले हैं १। कदाचित् अविभक्तिवाले बहुत जीव हैं और विभक्तिवाला एक जीव है २। कदाचित् अविभक्तिवाले बहुत जीव हैं और विभक्तिवाले बहुत जीव हैं ३। अनुत्कृष्ट प्रदेशोंकी अपेक्षा कदाचित् सब जीव विभक्तिवाले हैं १। कदाचित् बहुत जीव विभक्तिवाले हैं और एक जीव अविभक्तिवाला है २। कदाचित् बहुत जीव विभक्तिवाले हैं और बहुत जीव अविभक्तिवाले हैं ३। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्यत्रिक और सब देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तक जीवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेश-विभक्तिवाले जीवोंके अविभक्तिवाले जीवोंके साथ आठ भङ्ग होते हैं। तथा अनुत्कृष्ट प्रदेश-विभक्तिवाले जीवोंके भी अविभक्तिवाले जीवोंके साथ आठ भङ्ग करने चाहिए। इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ अट्ठाईस प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले और अविभक्तिवाले तथा अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले और अविभक्तिवाले जीवोंके भङ्ग कहकर फिर चार गतियोंमें वे बतलाये गये हैं। उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति उत्कृष्ट योगसे होती है। यह सदा सम्भव नहीं है, इसलिए कदाचित् एक भी जीव उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला नहीं होता, कदाचित् एक जीव उत्कृष्ट प्रदेश-विभक्तिवाला होता है और कदाचित् नाना जीव उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले होते हैं, इसलिए उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा तीन भङ्ग होते हैं। भङ्ग मूलमें ही कहे हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा विचार करने पर भी तीन भङ्ग ही प्राप्त होते हैं, क्योंकि कदाचित् सब जीव अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके धारक होते हैं, कदाचित् सब जीव अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके धारक होते हैं और एक जीव अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका धारक नहीं होता और कदाचित् नाना जीव अनुत्कृष्ट प्रदेश-विभक्तिके धारक होते हैं और नाना जीव अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके धारक नहीं होते, इसलिए इस अपेक्षासे भी तीन भङ्ग बन जाते हैं। लब्ध्यपर्याप्त मनुष्योंको छोड़कर गति मार्गणाके अन्य सब भेदोंमें यह ओघ प्ररूपणा अविकल घटित हो जाती है, इसलिए उनमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र मनुष्य अपर्याप्तक यह सान्तर मार्गणा है इसलिए इसमें उत्कृष्ट और अनु-त्कृष्ट दोनों प्रदेशविभक्तियोंके अपने-अपने अविभक्तिवालोंके साथ एक और नाना जीवोंकी अपेक्षा आठ-आठ भङ्ग बन जानेसे उनका अलगसे निर्देश किया है। आगे भी यह पद्धति अनाहारक मार्गणा तक अपनी-अपनी विशेषताके साथ घटित हो जाती है, इसलिए अनाहारक मार्गणा तक प्रकृतके समान जाननेकी सूचना की है।

इस प्रकार नाना जीवोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट भङ्गविचय समाप्त हुआ।

§ ५८. जहण्णए पयदं। तं चेव अट्ठपदं। णवरि जहण्णमजहण्णं ति भाणिदव्वं। अट्ठावीसं पयडीणं जहण्णपदेसविहत्तियाणं तिण्णि भंगा। अजहण्णपदेसविहत्तियाणं पि तिण्णि चेव भंगा। एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-मणुसतिय-सव्वदेवा त्ति। मणुसअपज्ज० जहण्णाजहण्ण० अट्ठ भंगा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

एवं णाणाजीवेहि भंगविचओ समत्तो।

§ ५९. संपहि एदेण अहियारेण सूचिदसेसाहियाराणमुच्चारणं भणिस्सामो। भागाभागो दुविहो—जहण्णओ उक्कस्सओ चेदि। उक्कस्से पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण छव्वीसं पयडीणमुक्क० पदेसविहत्तिया जीवा सव्वजीवाणं केव०? अणंतभागो। अणुक्क० सव्वजीवाणं केव०? अणंता भागा। सम्म०-सम्मामि० उक्क० पदेसविहत्ति० सव्वजी० के०? असंखेज्जदिभागो। अणुक्क० सव्वजी० के०? असंखे०भागा। एवं तिरिक्खोघं।

---

§ ५८ जघन्यका प्रकरण है वही अर्थपद है। इतनी विशेषता है कि उत्कृष्ट और अनुत्कृष्टके स्थानमें जघन्य और अजघन्य कहना चाहिए। अट्ठाईस प्रकृतियोंके जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंके तीन भङ्ग होते हैं। अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंके भी तीन भङ्ग होते हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्यत्रिक और सब देवोंमे जानना चाहिए मनुष्य अपर्याप्तकोंमे जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा आठ आठ भङ्ग होते हैं। इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—पहले उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंकी अपेक्षा ओघसे और चारों गतियोंमे जहाँ जितने भङ्ग सम्भव हैं वे घटित करके बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ पर भी घटित कर लेने चाहिए। मात्र यहाँ उत्कृष्ट और अनुत्कृष्टके स्थानमें जघन्य और अजघन्य कहना चाहिए।

इस प्रकार नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय समाप्त हुआ।

§ ५९. अब इस अधिकारसे सूचित हुए शेष अधिकारोंकी उच्चारणाका कथन करते हैं। भागाभाग दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं? अनन्तवें भागप्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं? अनन्त बहुभागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं। असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—मोहनीयकी सत्तासे युक्त कुल जीव राशि अनन्तानन्त है। उसमेंसे ओघसे इक्कीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव अधिकसे अधिक असंख्यात हो सकते हैं। चार सज्वलन और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव अधिकसे अधिक संख्यात हो सकते हैं। शेष सब जीव अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले होते हैं, इसलिए यहाँ छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट

§ ६० आदेसेण णेरइएसु अट्ठावीसं पयडीणं उक्क० सव्वजी० केव० ? असंखे०भागा। अणुक्क० असंखेज्जा भागा। एवं सव्वणिरय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस०-मणुसअपज्ज०-देव भवणादि जाव अवराइदा त्ति वत्तव्वं। मणुसपज्ज-मणुस्सिणि-सव्वट्ठसिद्धेसु अट्ठावीसं पयडीणमुक्क० पदे० सव्वजी० केव० ? संखे० भागो। अणुक्क० संखेज्जा भागा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ ६१ जहण्णए पयदं। जहण्णए उक्कस्सभंगो। णवरि जहण्णाजहण्णं त्ति भाणिदव्वं। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

एवं भागाभागो समत्तो।

§ ६२ परिमाणं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं च। उक्कस्से पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-बारसक०-अट्ठणोक० उक्कस्सपदेसविहत्तिया

प्रदेशविभक्तिवाले जीव अनन्तवें भागप्रमाण और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव अनन्त बहुभागप्रमाण कहे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तावाले ही कुल जीव असंख्यात होते हैं। उनमें भी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले असंख्यातवें भागप्रमाण हो सकते हैं। शेष अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले होते हैं इसलिए इन दोनों प्रकृतियोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले असंख्यातवें भागप्रमाण और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले असंख्यात बहुभागप्रमाण कहे हैं। सामान्य तिर्यञ्च अनन्तप्रमाण हैं, इसलिए इस मार्गणामें ओघ प्ररूपणा बन जानेसे इनमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है।

§ ६० आदेशसे नारकियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, देव और भवनवासियोंसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें कथन करना चाहिए। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—यहां जिन मार्गणाओंकी संख्या असंख्यात है उनमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण बतलाए हैं। तथा जिन मार्गणाओंका परिमाण संख्यात है उनमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण बतलाये हैं। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ६१ जघन्यका प्रकरण है। जघन्यका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। इतनी विशेषता है कि उत्कृष्ट और अनुत्कृष्टके स्थानमें जघन्य और अजघन्य ऐसा कहना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

इस प्रकार भागाभाग समाप्त हुआ।

§ ६२. परिमाण दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व बारह कषाय और आठ नोकषायोंकी

केत्तिया ? असंखेज्जा । अणुक० पदे० केत्ति० ? अणंता । सम्मत्त०-सम्मामि० उक्क० पदेसवि० केत्ति० ? संखेज्जा । अणुक० केत्ति० ? असंखेज्जा । चदुसंज०-पुरिस० उक्क० पदे० केत्ति० ? संखेज्जा । अणुक० पदे० केत्ति० ? अणंता ।

§ ६३. आदेसेण णिरय० सत्तावीसं पयडीणमुक्क०-अणुक० पदे० केत्ति० ? असंखेज्जा । सम्मत्त० उक्क० पदे०. के० ? संखेज्जा । अणुक० पदे० केत्ति० ? असंखेज्जा । एवं पढमाए । बिदियादि जाव सत्तमि त्ति अट्ठावीसं पयडीणमुक्कस्स०-अणुक्कस्स० केत्ति० ? असंखेज्जा ।

§ ६४. तिरिक्खगईए तिरिक्खेसु छव्वीसं पयडीणं उक्क० पदे० केत्ति० ? असंखेज्जा । अणुक० केत्ति० ? अणंता । सम्मत्त० उक्क० पदे० केत्ति० ? संखेज्जा । अणुक० केत्ति० ? असंखेज्जा । सम्मामि० उक्कस्साणुक० केत्ति० ? असंखेज्जा ।

उत्कृष्ट विभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । चार संज्वलन और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । तथा अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं ।

विशेषार्थ — ओघसे चार संज्वलन और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति क्षपकश्रेणिमें होती है, इसलिए इनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका परिमाण संख्यात कहा है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति क्षायिक सम्यग्दर्शनकी प्राप्तिके समय होती है, इसलिए इनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका परिमाण भी संख्यात कहा है । शेष कथना सुगम है ।

§ ६३. आदेशसे नारकियोंमें सत्ताईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविक्तवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इसी प्रकार पहली पृथिवीमें जानना चाहिए । दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असख्यात हैं ।

विशेषार्थ—यहा सामान्यसे नारकियोंमें और पहली पृथिवीके नारकियोंमें कृतकृत्य-वेदकसम्यग्दृष्टि उत्पन्न होते हैं और इनका अधिकसे अधिक परिमाण संख्यात होता है, इसलिए इनमें सम्यक्त्व प्रकृतिकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका परिमाण संख्यात कहा है । शेष कथन सुगम है । इसी प्रकार आगे भी अपने अपने परिमाण और दूसरी विशेषताओंको जान कर सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका परिणाम ले आना चाहिए । उल्लेखनीय विशेषता न होनेसे हम अलग अलग स्पष्टीकरण नहीं कर रहे हैं ।

§ ६४. तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं ? अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ?

पंचिंदियतिरिक्ख-पंचिं०तिरिक्खपज्जत्ताणं पढमपुढविभंगो। पंचिंदियतिरिक्खजोणिणीणं विदियपुढविभंगो। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० अट्ठावीसं पयडीणमुक्कस्साणुक्क० पदे० केत्ति०? असंखेज्जा। एवं मणुसअपज्ज० भवण०-वाण०-जोदिसिए त्ति।

§ ६५ मणुसगदि० मिच्छ०-बारसक०-छण्णोक० उक्कस्साणुक्क० पदे० असंखेज्जा। सम्म०-सम्मामि०-चदुसंज०-तिण्णिवेदाणमुक्क० केत्ति०? संखेज्जा। अणुक्क० पदे०वि० केत्ति०? असंखेज्जा। मणुसपज्जत्त०-मणुसिणीसु सव्वट्ठसिद्धि० अट्ठावीसं पयडीणमुक्क०-अणुक्क० पदेस० केत्ति०? संखेज्जा।

§ ६६ देवगदीए देवेसु सोहम्मादि जाव सहस्सारो त्ति पढमपुढविभंगो। आणदादि जाव अवराइदो त्ति अट्ठावीसं पयडीणं उक्क० पदे०वि० केत्ति०? संखेज्जा। अणुक्क० केत्ति०? असंखेज्जा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

असंख्यात हैं। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें पहली पृथिवीके समान भङ्ग है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनियोंमें दूसरी पृथिवीके समान भङ्ग है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, भवनवासी व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि जीव उत्पन्न होते हैं, इसलिए इनमें पहली पृथिवीके समान भङ्ग बन जानेसे उनके समान जाननेकी सूचना की है। परन्तु पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनी जीवोंमें कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि जीव नहीं उत्पन्न होते, इसलिए इनमें दूसरी पृथिवीके समान भङ्ग बन जानेसे उसके समान जाननेकी सूचना की है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ६५ मनुष्यगतिमें मनुष्योंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, चार संज्वलन और तीन वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं? संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। मनुष्यपर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं? संख्यात हैं।

§ ६६ देवगतिमें देवोंमें तथा सौधर्म कल्पसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें पहली पृथिवीके समान भङ्ग है। आनत कल्पसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं? संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—बारहवें कल्प तक तिर्यञ्च भी मरकर उत्पन्न होते हैं इसलिए वहाँ तकके देवोंमें पहली पृथिवीके समान भङ्ग बन जानेसे उनके समान जानने की सूचना की है। तथा आगेके देवोंमें मनुष्य ही मर कर उत्पन्न होते हैं इसलिए अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका परिमाण संख्यात प्राप्त होनेसे वहाँ वह उक्तप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ६७. जहण्णए पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण छव्वीसं पयडीणं जह० केत्ति० ? संखेज्जा। अज० केत्ति० ? अणंता। सम्म०-सम्मामि० जह० पदे०वि० केत्ति० ? संखेज्जा। अज० के० ? असंखेज्जा। एवं तिरिक्खाणं।

§ ६८. आदेसेण णेरइएसु अट्ठावीसं पयडीणं जह० के० ? संखेज्जा। अज० केत्ति० ? असंखेज्जा। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देव-भवणादि जाव अवराइदो त्ति। मणुसपज्ज०-मणुसिणी-सव्वट्ठसिद्धि० सव्वपदा० के० ? संखेज्जा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

---

§ ६७. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश—ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असख्यात हैं। इसी प्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—छब्बीस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति क्षपणाके समय यथायोग्य स्थानमें होती है। यतः इनकी क्षपणा करनेवाले जीव संख्यात होते हैं, अतः इनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका परिमाण संख्यात कहा है। इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीव अनन्त होते हैं यह स्पष्ट ही है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्ति अन्य विशेषताओंके रहते हुए अपनी अपनी उद्वेलनाके अन्तिम समयमें होती है। यतः ये जीव भी सख्यात ही होते हैं, अतः इनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका परिमाण सख्यात कहा है। इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीव असंख्यात होते हैं यह स्पष्ट ही है। सामान्यसे तिर्यञ्च अनन्त होते हैं, इसलिए उनमें यह ओघप्ररूपणा वन जाती है, अतः उनमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र उनमें स्वामित्वका विचार कर परिमाण घटित करना चाहिए।

§ ६८ आदेशसे नारकियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने है ? सख्यात है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असख्यात हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर अपराजित विमान तकके देवो जानना चाहिए। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदवाले जीव कितने हैं ? सख्यात हैं। इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—सामान्य नारकियोंसे लेकर पूर्वोक्त सब मार्गणाओंमे सख्यात जीव ही सब प्रकृतियोकी जघन्य प्रदेशविभक्ति करते हैं, इसलिए सर्वत्र अट्ठाईस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका परिमाण संख्यात कहा है। तथा मनुष्य पर्याप्त आदि तीन मार्गणाओंका परिमाण सख्यात है और शेषका असख्यात है, इसलिए इनमें अपने अपने परिमाणके अनुसार अट्ठाईस प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवों का परिमाण कहा है।

इस प्रकार परिमाण समाप्त हुआ।

§ ६९. खेत्ताणुगमो दुविहो—जहण्णओ उक्कस्सओ च। उक्कस्से पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण छव्वीसं पयडीणमुक्क० पदे० विहत्तिया केवडि खेत्ते? लोग० असंखे०भागे। अणुक्क० केव०? सव्वलोगे। सम्म०-सम्मामि० उक्क०-अणुक्क० पदे० केव०? लोग० असंखे०भागे। एवं तिरिक्खाणं।

§ ७०. आदेसेण णेरइएसु अट्ठावीसं पयडीणमुक्क०-अणुक्क० लोग० असंखे०भागे। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-सव्वमणुस-सव्वदेवा त्ति। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ ७१. जहण्णए पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण सव्वपयडीणं जह०-अज० उक्कस्साणुक्कस्सपद०भंगो। एवं सव्वमग्गणासु णेदव्वं।

---

§ ६९. क्षेत्रानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका सर्व लोकप्रमाण क्षेत्र है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। इसी प्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव करते हैं और उनका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए यहाँ ओघसे उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति उक्त प्रकृतियोंकी सत्तावाले प्रायः सब जीवोंके सम्भव है और उनका क्षेत्र सर्व लोक है, इसलिए यहाँ उक्त प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका सर्व लोकप्रमाण क्षेत्र कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। सामान्य तिर्यञ्चोंमें यह ओघ घटित हो जानेसे उनमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है।

§ ७०. आदेशसे नारकियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिए। इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—पूर्वोक्त सामान्य नारकी आदि उक्त मार्गणाओंका क्षेत्र ही लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इनमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। आगे अनाहारक मार्गणा तक इसी प्रकार विचार कर क्षेत्र घटित किया जा सकता है, इसलिए उन मार्गणाओंमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है।

§ ७१. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका क्षेत्र उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंके समान है। इसी प्रकार सब मार्गणाओंमें ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ सब प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिके स्वामित्वको देखना

§ ७२. पोसणं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं च। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि०-ओघेण आदेसेण य। ओघेण छव्वीस पयडीणमुक्क० पदेसविहत्तिएहि केवडियं खेत्तं पोसिदं? लोगस्स असंखे०भागो। अणुक्क० सव्वलोगो। सम्म०-सम्मामि० उक्क० पदे० केव०? लोगस्स असंखे०भागो। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस भागा देसूणा सव्वलोगो वा।

§ ७३. आदेसेण णेरइएसु अट्ठावीसं पयडीणमुक्क० लोग० असंखे०भागो। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस भागा देसूणा। एवं सत्तमाए। पढमाए पुढवीए खेत्तभंगो। विदियादि जाव छट्ठि त्ति अट्ठावीस पयडीणमुक्क० खेत्तं। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो एक्क-बे-तिण्णि-चत्तारि-पंचचोद्दस भागा देसूणा।

विदित होता है कि इनकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका क्षेत्र उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंके समान बन जाता है, इसलिए उसे उनके समान जाननेकी सूचना की है।

§ ७२ स्पर्शन दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके स्वामित्वको देखनेसे विदित होता है कि उनका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागसे अधिक सम्भव नहीं है, इसलिए वह उक्त प्रमाण कहा है। तथा छब्बीस प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति एकेन्द्रिय आदि जीवोंके भी सम्भव है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण कहा है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग है, क्योंकि ये जीव पल्यके असंख्यातवें भागसे अधिक नहीं होते, इसलिए इनका वर्तमान स्पर्शन उक्त क्षेत्रप्रमाण ही प्राप्त होता है। तथा देवोंके विहारवत्स्वस्थान आदिकी अपेक्षा यह स्पर्शन त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण और मारणान्तिक व उपपादपदकी अपेक्षा सर्व लोकप्रमाण बन जानेसे उक्त प्रमाण कहा है।

§ ७३ आदेशसे नारकियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए। पहली पृथिवीमें क्षेत्रके समान भङ्ग है। दूसरीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके कुछ कम एक, कुछ कम दो, कुछ कम तीन, कुछ कम चार और कुछ कम पाँच बटे

§ ७४. तिरिक्खगदीए तिरिक्खेसु छव्वीसं पयडीणमुक्क० लोग० असंखे० भागा। अणुक्क० सव्वलोगा। सम्म०-सम्मामि० उक्क० खेत्तं। अणुक्क० लोग० असंख०भागा सव्वलोगा वा। सव्वपंचिंदियतिरिक्खेसु अट्ठावीसं पयडीणं उक्क० लोगस्स असंख०भागो। अणुक्क० लोगस्स असंख०भागो सव्वलोगो वा। एवं सव्वमणुस्साणं।

§ ७५. देवगदीए देवेसु अट्ठावीसं पयडीणमुक्क० खेत्तभंगो। अणुक्क० लोग० असंख०भागा अट्ठ-णवचोद्दसभागा देसूणा। एवं सोहम्मीसाणाणं। भवण०-वाण०-जोदिसि० अट्ठावीसं पयडीणमुक्क० खेत्तं। अणुक्क० लोग० असंखे०भागा अद्धुट्ठ-अ

णवचोद्दस० देसूणा। सणक्कुमारादि जाव सहस्सारो त्ति अट्ठावीसं पयडीणं उक्क० खेत्तं। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो अट्ठचो० देसूणा। आणदादि जाव अच्चुदो त्ति अट्ठावीसं पयडीणमुक्क० खेत्तं। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० देसूणा। उवरि खेत्तभंगो। एवं णेदव्वं जाव अणाहारए त्ति।

§ ७६. जहण्णए पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण छव्वीसं पयडीणं जह० लोग० असंखे०भागो। अज० सव्वलोगो। सम्म-सम्मामि० जह० अज० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-चोद्द० देसूणा सव्वलोगो वा।

§ ७७. आदेसेण णेरइएसु अट्ठावीसं पयडीणं ज० लोग० असंखे०भागो। अज० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० देसूणा। एवं सत्तमाए। पढमाए पुढवीए खेत्तभंगो। विदियादि जाव छट्ठि त्ति अट्ठावीसं पयडीणं जह० खेत्तं। अज० लोग०

आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। आनत कल्पसे लेकर अच्युत कल्प-तकके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। आगे क्षेत्रके समान भङ्ग है। इस प्रकार अनाहारक मार्गणातक ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ सर्वत्र अपने अपने वर्तमान आदि स्पर्शनको ध्यानमें रख कर सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्शन कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ७६. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकार है—ओघ और आदेश। ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्ति एकेन्द्रियादि जीवोंके भी सम्भव है और देवोंके विहारवत्स्वस्थान आदिके समय भी हो सकती है। तथा इनका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है ही, इसलिए इनकी दोनों प्रकारकी प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण और सर्व लोकप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ७७. आदेशसे नारकियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए। पहली पृथिवीमें क्षेत्रके समान भङ्ग

असंखे० भागो एक-बे तिण्णि-चत्तारि-पंचचोद्दस भागा वा देसूणा ।

§ ७८. तिरिक्खगईए तिरिक्खेसु छव्वीसं पयडीणं जह० खेत्तं । अज० सव्व लोगो । सम्म०-सम्मामि० जह० अज० लोग० असंखे०भागा सव्वलोगो वा । सव्व-पंचिंदियतिरिक्ख-सव्वमणुस्सेसु छव्वीसं पयडीणं जह० लोग असंखे०भागो । अज० लोगस्स असंखेज्जदिभागो सव्वलोगो वा । सम्म०-सम्मामि० जह०-अज० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा ।

§ ७९. देवगदीए देवेसु छव्वीसं पयडीणं जह० लोग० असंखे०भागो । अज० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-णवचोद्दस देसूणा । सम्म-सम्मामि० जह० अज० लोग० असंखे० भागो अट्ठ-णवचाद्द देसूणा ।

§ ८०. भवण-वाण-जोदिसि० बावीसं पयडीणं जह० लोग० असंख०

है। दूसरीसे लेकर छठी तककी पृथिवियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा क्रमसे त्रसनालीके कुछ कम एक, कुछ कम दो, कुछ कम तीन कुछ कम चार और कुछ कम पाँच बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—नारकियोंमें और उनके अवान्तर भेदोंमें स्वस्थ और अनुत्कृष्ट प्रदेश-विभक्तिकी अपेक्षा जो स्पर्शन घटित करके बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी घटित कर लेना चाहिए। आगे भी अपनी अपनी विशेषता जानकर स्पर्शन घटित कर लेना चाहिए।

§ ७८. तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और सब मनुष्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व की जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

§ ७९. देवगतिमें देवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम आठ तथा कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—यहाँ सामान्य देवोंमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्ति दीर्घ आयुवाले देवोंमें होती है और उनका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए उनकी अपेक्षा स्पर्शन उक्त प्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ८०. भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें बाईस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति-

भागो। अज० लोग० असंखे०भागो अद्धट्ठ-अट्ठ-णवचो० देसूणा। सम्म-सम्मामि० जह०-अज० लोग० असंखे०भागो अद्धुट्ठ-अट्ठ-णवचोद्दस० देसूणा। णवरि जोदिसि० सम्म०-सम्मामि० जह० लोग० असंखे०भागो अद्धुट्ठा वा अट्ठचोद्द० देसूणा। अणंताणु०४ जह० लोग० असंखे०भागो अद्धुट्ठ-अट्ठचोद्द० देसूणा। अज० लोग० असंखे०भागो अद्धुट्ठ-अट्ठ-णवचो० देसूणा।

§ ८१. सोहम्मीसाण० देवोघं। णवरि अणंताणु०चउक्क० जह० लोगस्स असंखे०भागो अट्ठचोद्द० देसूणा।

§ ८२. सणक्कुमारादि जाव सहस्सारो त्ति बावीसं पयडीण जह० खेत्तं। अज० लोग० असंखे०भागो अट्ठचो० देसूणा। सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क०

वाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके कुछ कम साढे तीन, कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके कुछ कम साढे तीन, कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि ज्योतिषी देवोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके कुछ कम साढ़े तीन और कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके कुछ कम साढ़े तीन और कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके कुछ कम साढ़े तीन, कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—उक्त देवोंमें एकेन्द्रियोंमें मारणान्तिक समुद्घात करते समय अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्ति नहीं होती, इसलिए इनमें उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्शन त्रसनालीके कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण नहीं कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ८१. सौधर्म और ऐशान कल्पके देवोंमें सामान्य देवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—सौधर्मद्विकमें विहारवत्स्वस्थान आदिके समय भी अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्ति बन जाती है, इसलिए इनमें उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्शन त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण भी कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ८२. सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें बाईस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्ति-

जह०-अज० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० देसूणा। आणदादि जाव अच्चुदो त्ति बावीसं पयडीणं जह० लोग० असंखे०भागो। अज० लोग० असंखे०भागो छचोद्द० देसूणा। सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क० जह०-अज० लोग० असंखे०भागो छ-चोद्द० देसूणा। उवरि खेत्तभंगो। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

❀ सव्वकम्माणं णाणाजीवेहि कालो कायव्वो।

§ ८३. सुगममेदं सुत्तं। संपहि एदेण सुत्तेण सूचिदत्थस्स उच्चारणं वत्तइस्सामो। तं जहा—कालो दुविहो, जहण्णओ उक्कस्सओ चेदि। उक्कस्से पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छत्त-बारसक०-अट्ठणोक० उक्क० पदेसवि० जह० एगसमओ, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अणुक्क० सव्वद्धा। सम्म०-सम्मामि०-चदुसंज०-पुरिसवेद० उक्क० पदे० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। अणुक्क० सव्वद्धा।

वाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। आनतसे लेकर अच्युत कल्प तकके देवोंमें बाईस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इनसे ऊपरके देवोंमें क्षेत्रके समान भङ्ग है। इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

इस प्रकार स्पर्शन समाप्त हुआ।

❀ सब कर्मोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा काल करना चाहिए।

§ ८३. यह सूत्र सुगम है। अब इस सूत्रसे सूचित हुए अर्थकी उच्चारणा बतलाते हैं। यथा—काल दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व बारह कषाय और आठ नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल सर्वदा है। सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व चार संज्वलन और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल सर्वदा है।

विशेषार्थ—सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति एक समय तक हो और द्वितीय समयमें न हो यह सम्भव है, इसलिए सबकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कहा है। तथा मिथ्यात्व आदिकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति नाना जीवोंकी अपेक्षा लगातार असंख्यात समय तक हो सकती है, इसलिए इनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है और शेष सात प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति नाना जीवोंकी

§ ८४. आदेसेण णेरइएसु सत्तावीसं पयडीणमुक्क० पदे० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अणुक्क० सव्वद्धा। सम्मत्त० ओघं। एवं पढमाए। विदियादि जाव सत्तमि त्ति अट्ठावीसं पयडीणमुक्क० पदे० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अणुक्क० सव्वद्धा।

§ ८५. तिरिक्खगदीए तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खपज्जत्ताणं पढमपुढविभंगो। पंचिंदियतिरिक्खजोणिणीणं विदियपुढविभंगो। एवं पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्ताणं।

§ ८६. मणुस्सगदीए मणुस्स० मिच्छत्त-बारसक०-छण्णोक० उक्क० पदे० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अणुक्क० सव्वद्धा। सम्म०-सम्मामि०-चदुसंजल० तिण्हं वेदाणमुक्क० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। अणुक्क० सव्वद्धा। मणुसपज्ज०-मणुसिणीसु अट्ठावीसं पयडीणमुक्क० पदे० जह० एगस०, उक्क०

अपेक्षा निरन्तर संख्यात समय तक हो सकती है, इसलिए इनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है। नाना जीवोंकी अपेक्षा ऐसा समय नहीं प्राप्त होता जब किसी प्रकृतिकी सत्ता न हो, इसलिए सबकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल सर्वदा कहा है।

§ ८४ आदेशसे नारकियोंमें सत्ताईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल सर्वदा है। सम्यक्त्व प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार पहली पृथिवीमे जानना चाहिए। दूसरीसे लेकर सातवीं तक प्रत्येक पृथिवीमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल सर्वदा है।

विशेषार्थ—सामान्यसे नारकियोंमें और पहली पृथिवीमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव उत्पन्न होते हैं, इसलिए इनमें सम्यक्त्व प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान बन जाता है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ८५. तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्त जीवोंमें पहिली पृथिवीके समान भङ्ग है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनी जीवोंमें दूसरी पृथिवीके समान भङ्ग है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिए।

विशेषार्थ—प्रारम्भके तीन प्रकारके तिर्यञ्चोंमें कृतकृत्य वेदकसम्यग्दृष्टि जीव उत्पन्न होते हैं, इसलिए इनमें पहली पृथिवीके समान भङ्ग बन जानेसे उसके समान जाननेकी सूचना की है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ८६. मनुष्यगतिमे मनुष्योंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल सर्वदा है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, चार संज्वलन और तीन वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सख्यात समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल सर्वदा है। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें अट्ठाईस

संखे० समया । अणुक्क० सव्वद्धा । एवमाणदादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति ।

§ ८७ मणुसअपज्ज० छव्वीसं पयडीणमुक्क० पदे० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । अणुक्क० जह० खुद्दाभव० समऊणं, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । सम्म०-सम्मामि० एवं चेव । णवरि अणुक्क० जह० एगस० ।

§ ८८ देवगदीए देवाणं पढमपुढविभंगो । एवं सोहम्मादि जाव सहस्सारो त्ति । भवण०-वाण०-जोइसि० विदियपुढविभंगो । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल सर्वदा है । इसी प्रकार आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—सामान्य मनुष्योंमें जिस प्रकार ओघमें घटित करके बतला आये हैं उस प्रकार घटित कर लेना चाहिए । मात्र स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल इनमें अपने स्वामित्वके अनुसार संख्यात समय ही प्राप्त होता है इसलिए इन दोनों प्रकृतियोंकी परिगणना यहाँ सम्यक्त्व आदिके साथ की है । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देव तो संख्यात होते ही हैं । आनतादिमें ये ही उत्पन्न होते हैं, इसलिए इनमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल संख्यात समय बननेसे तत्प्रमाण कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ ८७ मनुष्य अपर्याप्तकोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग इसीप्रकार है । इतनी विशेषता है कि इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है ।

विशेषार्थ—मनुष्य अपर्याप्त यह सान्तर मार्गणा है । यह सम्भव है कि इस मार्गणामें नाना जीव क्षुल्लक भव तक ही रहें । इसलिए इस कालमेंसे उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका एक समय काल कम कर देने पर अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण बन जानेसे यहाँ छब्बीस प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण कहा है । तथा इस मार्गणाका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए यहाँ सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल उक्त काल प्रमाण कहा है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये उद्वेलना प्रकृतियाँ हैं इसलिए यहाँ इनकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय बन जानेसे उक्त काल प्रमाण कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ ८८ देवगतिमें देवोंमें पहली पृथिवीके समान भङ्ग है । इसी प्रकार सौधर्मकल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए । भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें दूसरी पृथिवीके समान भङ्ग है । इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए ।

विशेषार्थ—सौधर्मादि देवोंमें भी प्रथम पृथिवीके नारकियोंके समान कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव उत्पन्न होते हैं इसलिए इनमें प्रथम पृथिवीके नारकियोंके समान भङ्ग बन जानेसे उनके समान जाननेकी सूचना की है । तथा भवनत्रिकमें कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि जीव मर कर

§ ८६. जहण्णए पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण अट्ठावीसं पयडीणं जह० पदे० केव० ? जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। अज० सव्वद्धा। एवं सव्वणिरय-सव्वतिरिक्ख-सव्वमणुस्स-सव्वदेवा त्ति। णवरि मणुस्स-अपज्ज० अट्ठावीसं पयडीण जह० पदे० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। अज० जह० खुद्दाभवग्गहणं समयूणं, सत्तणोकसायाणमंतोमुहुत्त, सम्म०-सम्मामि० एगस०; सव्वेसिमुक्क० पलिदो० असंखे०भागो। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

❀ अंतरं। णाणाजीवेहि सव्वकम्माण जह० एगसमओ, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा।

§ ९०. एदेण सुत्तेण सूचिदजहण्णुक्कस्संतराणमुच्चारणं वत्तइस्सामो। तं जहा—

नहीं उत्पन्न होते, इसलिए इनमे दूसरी पृथिवीके नारकियोंके समान भङ्ग बन जानेसे उनके समान जाननेकी सूचना की है। शेष कथन सुगम है।

इस प्रकार नाना जीवोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट काल समाप्त हुआ।

§ ८९. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अट्ठाईस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका काल सर्वदा है। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लक भव ग्रहणप्रमाण है, सात नोकषायोंका अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका एक समय है और सबका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—अट्ठाईस प्रकृतियोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति क्षपणाके समय होती है। यह सम्भव है कि एक या अधिक जीव एक समय तक ही इनकी जघन्य प्रदेशविभक्ति करें और यह भी सम्भव है कि क्रमसे नाना जीव संख्यात समय तक इनकी जघन्य प्रदेशविभक्ति करते रहें, इसलिए ओघसे इनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है। इनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका काल सर्वदा है यह स्पष्ट ही है। अपने अपने स्वामित्वको देखते हुए सब नारकी आदि मार्गणाओंमें यह काल घटित हो जाता है, इसलिए उनमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र मनुष्यअपर्याप्तकोंमें विशेषता है। बात यह है कि वह सान्तर मार्गणा है, इसलिए उसमें सब प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अलग अलग प्राप्त होता है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। विशेष विचार स्वामित्वको देखकर कर लेना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

इसप्रकार नाना जीवोंकी अपेक्षा काल समाप्त हुआ।

❀ अन्तर। नाना जीवोंकी अपेक्षा सब कर्मोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है।

§ ९०. इस सूत्रसे सूचित हुए जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरको उच्चारणाके अनुसार बतलाते

अंतरं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं च। उक्कस्से पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण अट्ठावीसं पयडीणमुक्क० पदे० जह० एगसमओ, उक्क० अणंतकाल-मसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। अणुक्क० णत्थि अंतरं। एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-सव्वमणुस्स-सव्वदेवा त्ति। णवरि मणुसअपज्ज० अट्ठावीसं पयडीणमणुक्क० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ ९१ जहण्णए पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण जहा उक्कस्संतरं परूविदं तहा जहण्णाजहण्णंतरपरूवणा परूवेदव्वा।

§ ९२ सण्णियासो दुविहो—जहण्णओ उक्कस्सओ चेदि। उक्कस्सए पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसविहत्तिओ

है। यथा—अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनके बराबर है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तक जीवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति गुणितकर्मांशिक जीवोंके होती है। यह सम्भव है कि गुणितकर्मांशिकविधिसे आकर एक या नाना जीव एक समयके अन्तरसे अट्ठाईस प्रकृतियोंकी अलग अलग उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति करें और अनन्त कालके अन्तरसे करें, इसलिए यहाँ ओघसे और गति मार्गणाके सब भेदोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल कहा है। यहाँ सबकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है यह स्पष्ट ही है। मात्र मनुष्य अपर्याप्त यह सान्तर मार्गणा है, इसलिए इसमें अपने अन्तरकालके अनुसार अट्ठाईस प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ९१ जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे जिस प्रकार उत्कृष्ट पदके आश्रयसे अन्तरकाल कहा है उस प्रकार जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिके अन्तरकालकी प्ररूपणा करनी चाहिए।

विशेषार्थ—जघन्य प्रदेशविभक्ति क्षपितकर्मांशिक जीवके होती है, इसलिए सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तर काल उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके समान बन जानेसे उसके समान जाननेकी सूचना की है।

इस प्रकार नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरकाल समाप्त हुआ।

§ ९२ सन्निकर्ष दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला जीव

बारसकसाय-छण्णोकसायाणं णियमा विहत्तिओ। तं तु उक्कस्सादो अणुक्कस्सं वेट्ठाणपदिदं अणंतभागहीणं असंखेज्जभागहीणं वा। इत्थि-णवुंसयवेदाणं णियमा अणुक्कस्सविहत्तिओ असखेज्जभागहीणो। इत्थिवेददव्वेण संखेज्जगुणहीणेण होदव्वं, णेरइयइत्थिवेदबंधगद्धादो कुरवित्थिवेदबंधगद्धाए लद्धणवुंसयवेदबंधगद्धा संखेज्जभागबहुभागा। एवं संखेज्जगुणत्तादो कुरवेसु इत्थिवेदपूरणकालो एगगुणहाणीए असंखेज्जदिभागो त्ति कट्टु णासंखे०भागहीणत्तं जुत्तं, तत्थ असंखेज्जाणं गुणहाणीणमुवलंभादो। णोवलंभो असिद्धो, 'रदीए उक्कस्सदव्वादो इत्थिवेदुक्कस्सदव्वं संखेज्जगुण' इदि उवरि भण्णमाणअप्पाबहुअसुत्तेण तत्थ असंखेज्जाणं गुणहाणीणमुवलंभादो। णवुंसयवेददव्वेण वि संखेज्जभागहीणेण होदव्व, ईसाणदेवेसु णवुंसयवेदेण त्थावरबंधयद्धं सयलं लद्धूण तसबंधगद्धाए पुणो संखेज्जखंडीकदाए लद्धबहुभागत्तादो। कुरवीसाणदेवेसु इत्थि-णवुंसयवेदाणि आवूरिय णेरइएसुप्पज्जिय उक्कस्सीकयमिच्छत्तस्स असंखे०भागहाणी होदि त्ति वोत्तुं जुत्तं, तेत्तीस सागरोवमेसु गलिदासखेज्जगुणहाणिदव्वस्स णिरयगइसंचयं मोत्तूण कुरवीसाणदेवेसु संचिददव्वस्स अवट्ठाणविरोहादो। तम्हा

बारह कषाय और छह नोकषायोंकी नियमसे विभक्तिवाला होता है। किन्तु वह इसकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला भी होता है और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला भी होता है। यदि अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा उसके अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति दो स्थान पतित होती है—या तो अनन्तभागहीन होती है या असंख्यातभाग हीन होती है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला होता है जो नियमसे असंख्यातभागहीन प्रदेशविभक्तिवाला होता है।

शंका — स्त्रीवेदका द्रव्य संख्यातगुणा हीन होना चाहिए, क्योंकि नारकियोंमें जो स्त्रीवेदका बन्धक काल है उससे तथा देवकुरु और उत्तरकुरुमें जो स्त्रीवेदका बन्धककाल है उससे प्राप्त हुआ नपुंसकवेदका बन्धक काल संख्यात बहुभाग अधिक देखा जाता है। इसप्रकार संख्यातगुणा होनेसे देवकुरु उत्तरकुरुमें स्त्रीवेदका पूरणकाल एक गुणहानिके असंख्यातवें भागप्रमाण है ऐसा मानकर उसे असंख्यातवें भागहीन मानना उचित नहीं है, क्योंकि वहा असंख्यात गुणहानियाँ उपलब्ध होती है और उनका प्राप्त होना असम्भव भी नहीं है, क्योकि रतिके उत्कृष्ट द्रव्यसे स्त्रीवेदका उत्कृष्ट द्रव्य संख्यातगुणा है इस प्रकार आगे कहे जानेवाले अल्पबहुत्व सूत्रके अनुसार वहाँ असंख्यात गुणहानियाँ उपलब्ध होती हैं। तथा नपुंसकवेदके द्रव्यको भी संख्यातवें भाग हीन नहीं होना चाहिए, क्योंकि ईशान कल्पके देवोंमें नपुंसकवेदके साथ समस्त स्थावर बन्धक कालको प्राप्त करके पुनः त्रसबन्धक कालके संख्यात खण्ड करने पर बहुभाग प्राप्त होता है। यदि कहा जाय कि उत्तरकुरु-देवकुरु और ऐशान कल्पके देवोंमें स्त्रीवेद और नपुंसकवेदको पूरकर तथा नारकियोंमे उत्पन्न होकर मिथ्यात्वके द्रव्यको उत्कृष्ट करनेवाले जीवके स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असख्यात भागहानि होती है सो ऐसा कहना ठीक नहीं है, क्योंकि तेतीस सागरप्रमाण कालके भीतर असंख्यात गुणहानिप्रमाण द्रव्यके गल जाने पर नरकगतिसम्बन्धी सञ्चयको छोड़कर कुरु और ऐशान कल्पके देवोंमें संचित हुए द्रव्यका अवस्थान माननेमें विरोध आता है, इसलिए असख्यातभागहीनपना नहीं बनता है?

असंखेज्जभागहीणत्तं ण घडदे त्ति ? ण, ईसाणदेवेसु उक्कस्सीकयइत्थि-णवुंसयवेद दव्वं णेरइएसुप्पज्जिय उक्कस्ससंकिलेसेणुक्कड्डिय उक्कस्सीकयमिच्छत्तस्स इत्थि-णवुंसयवेद दव्वाणमसंखे०भागहाणिं पडि विरोहाभावादो । एगसमयपबद्धाणीए असंखे०भागमेत्तपक्खेवेण तेत्तीससागरोवमेसु ट्ठिददव्वमुक्कड्डिय सयलदव्वस्स असंखे०भागमेत्तं चेव तत्थ गलेदि त्ति कुदो णव्वदे ? एदम्हादो चेव सण्णियासादो । किं च गुणिदकम्मंसिए 'उवरिल्लीणं ट्ठिदीणं णिसेयस्स उक्कस्सपदं हेट्ठिल्लीणं ट्ठिदीणं णिसेयस्स जहण्णपदं' त्ति वेयणासुत्तादो च णव्वदे जहा असंखे०भागो चेव गलदि त्ति । चदुसंजलण-पुरिसवेद० णियमा अणुक्क० असंखेज्जभागहीणा । सम्मत्तसम्मामिच्छत्ताणं णियमा अविहत्तिओ, गुणिदकम्मंसियत्तादो । एवं बारसकसाय-छण्णोकसायाणं ।

समाधान—नहीं, क्योंकि ईशानवासी जीवोंमें और ऐशान कल्पके देवोंमें उत्कृष्ट किये गये स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके द्रव्यको नारकियोंमें उत्पन्न होकर उत्कृष्ट संक्लेश द्वारा उत्कर्षित करके जिसने मिथ्यात्वके द्रव्यको उत्कृष्ट किया है उसके स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका द्रव्य असंख्यात भागहीन होता है इसमें कोई विरोध नहीं आता ।

शंका—एक गुणहानिके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा तेतीस सागर कालके भीतर स्थित द्रव्यका उत्कर्षण करके समस्त द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यको ही वहाँ गलाया जाता है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—इसी सन्निकर्षसे जाना जाता है। दूसरे गुणितकर्मांशिक जीवमें उपरितन स्थितियोंके निषेकका उत्कृष्ट पद होता है और अधस्तन स्थितियोंके निषेकका जघन्य पद होता है ऐसा जो वेदनाखण्डमें कहा है उससे जाना जाता है कि असंख्यातवाँ भाग ही गलाया है।

चार संज्वलन और पुरुषवेदकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला होता है जो अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति असंख्यातगुणी हीन होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी नियमसे अविभक्तिवाला होता है, क्योंकि मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला जीव गुणितकर्मांशिक है। इसी प्रकार बारह कषाय और छह नोकषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

विशेषार्थ—मिथ्यात्व बारह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी एक समान है, इसलिए मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवका अन्य प्रकृतियोंके साथ जिस प्रकारका सन्निकर्ष कहा है उसी प्रकार बारह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवके अन्य प्रकृतियोंके साथ सन्निकर्ष बन जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि बारह कषायोंकी उत्कृष्ट कर्मस्थिति चालीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण है और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट कर्मस्थिति संक्रमसे प्राप्त होती है जो चालीस कोड़ाकोड़ी सागरसे एक आवलि कम है, अतः मिथ्यात्वकी गुणितकर्मांशविधि करते हुए जिस जीवके तीस कोड़ाकोड़ी सागर व्यतीत हो गये हैं उसके आगे इन कर्मोंकी गुणितकर्मांशविधि करानी चाहिए। इस प्रकार कराने से मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके समय इन कर्मोंकी भी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति प्राप्त हो जाती है। अन्यथा मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके समय इन कर्मोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति रहती है। इसी प्रकार इन कर्मोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके समय मिथ्यात्वकी भी अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति घटित कर लेनी चाहिए। अब इन

§ ९३. सम्मामि० उक्क० पदेसविहत्तिओ मिच्छत्त-सम्मत्ताणं णियमा अणुक्क० असंखे०गुणहीणा। अट्ठक०-अट्ठणोक० णियमा अणुक्क० असंखे०भागहीणा। चदुसंज०-पुरिस० णियमा अणुक्क० संखेज्जगुणहीणा। सम्मत्तमेवं चेव। णवरि मिच्छत्तं णत्थि। सम्मामि० णियमा अणुक्क० असंखे०गुणहीणा।

§ ९४. इत्थिवेद० उक्क० विहत्तिओ मिच्छत्त-बारसक०-सत्तणोक० णियमा अणुक्क० असंखे०भागहीणा। चदुसंज०-पुरिस० णियमा अणुक्क० संखेज्ज०गुणहीणा।

उन्नीस प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा परस्पर सन्निकर्षका विचार हुआ। अब रहे शेष कर्म सो इन कर्मोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके समय तीन वेद और चार संज्वलन कषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति नहीं होती, अतः उस समय इन सात कर्मोंकी अनुत्कृष्ट प्रदेविभक्ति कही है। जो गुणितकर्मांशिक जीव मिथ्यात्व आदि उन्नीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति कर रहा है उसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका सत्त्व नहीं होता यह स्पष्ट ही है। शेष कथन परामर्श करके समझ लेना चाहिए।

§ ९३ सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व और सम्यक्त्वकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी हीन होती है। आठ कषाय और आठ नोकषायोंकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असख्यातभाग हीन होती है। चार सज्वलन और पुरुषवेदकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो नियमसे संख्यातगुणी हीन होती है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवके इसी प्रकार सन्निकर्ष करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके मिथ्यात्वका सत्त्व नहीं होता। तथा इसके सम्यग्मिथ्यात्वकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी हीन होती है।

विशेषार्थ—जो गुणितकर्मांशिक जीव क्षायिक सम्यक्त्वको प्राप्त करता है उसके मिथ्यात्वके अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके द्रव्यका सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रमण होने पर सम्यग्मिथ्यात्वका और सम्यग्मिथ्यात्वकी अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके द्रव्यका सम्यक्त्वमें संक्रमण होने पर सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है। इस प्रकार जिस समय सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है उस समय मिथ्यात्व और सम्यक्त्व दोनोंका सत्त्व रहता है किन्तु वह अपने उत्कृष्टकी अपेक्षा असंख्यातगुणा हीन अनुत्कृष्टरूप ही रहता है, क्योंकि उस समय तक मिथ्यात्वके द्रव्यमेंसे तो असंख्यात बहुभागप्रमाण द्रव्यका सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वमें संक्रमण हो लेता है। तथा सम्यक्त्वमें अभी सम्यग्मिथ्यात्वके असंख्यात बहुभागप्रमाण द्रव्यका संक्रमण नहीं हुआ है, इसलिए सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके समय मिथ्यात्व और सम्यक्त्वका द्रव्य अपने उत्कृष्टकी अपेक्षा असंख्यातगुणा हीन कहा है। इसी प्रकार सम्यक्त्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके समय सम्यग्मिथ्यात्वका द्रव्य अपने उत्कृष्टकी अपेक्षा असंख्यातगुणा हीन घटित कर लेना चाहिए। इसके मिथ्यात्वका सत्त्व नहीं रहता यह स्पष्ट ही है। शेष कथन सुगम है।

§ ९४ स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति करनेवाले जीवके मिथ्यात्व, बारह कषाय और सात नोकषायोंकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातभाग हीन होती है।

---

१ ता० प्रतौ 'असंखे०गुणहीणा' इति पाठः। २. ता०प्रतौ 'असंखेज्जगुणहीणा' इति पाठः।

एवं णवुंसयवेदस्स ।

§ ९१ पुरिसवेद० उक्क० पदेसविहत्तिओ चदुसंज० णियमा अणुक्क० संखे०गुणहीणा । छण्णोकसाय० णियमा अणुक्क० असंखेज्जगुणहीणो । कोधसंज० उक्क० पदे०विहत्तिओ हेट्ठिल्लाणं णियमा अविहत्तिओ । तिण्णं संज० णियमा अणुक्क० संखे०गुणहीणा । पुरिस० णियमा अणुक्क० असंखे०गुणहीणो । माणसंज० उक्क० पदेसविहत्तिओ हेट्ठिल्लाणमविहत्तिओ । माया-लोभसंज० णियमा अणुक्क० संखे०गुणहीणा । कोधसंज० णियमा अणुक्क० असंखे० गुणहीणा । मायासंज० उक्क० पदेसविहत्तिओ लोभसंज० णियमा अणुक्क० संखे०गुणहीणो । माणसंजलण० णियमा अणुक्क० असंखेज्जगुणहीणा । लोभसंजलण० उक्क० पदे०विहत्तिओ मायासंजलण० णियमा अणुक्क० असंखेज्जगुणहीणा ।

चार संज्वलन और पुरुषवेदकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो संख्यातगुणी हीन होती है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

विशेषार्थ—जो जीव बारह कषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति करके यथाविधि भोगभूमिमें उत्पन्न होता है उसके पल्यका असंख्यातवाँ भागप्रमाण काल जाने पर स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। उस समय मिथ्यात्व आदि बीस प्रकृतियोंकी प्रदेशविभक्ति अपने उत्कृष्टकी अपेक्षा असंख्यातवें भागप्रमाण हीन हो जाती है, क्योंकि उस समय तक इनका इतना द्रव्य अधःस्थितिगलना आदिके द्वारा गल जाता है और जिनका अन्य प्रकृतिरूप संक्रमण सम्भव है उनके द्रव्यका संक्रमण भी हो जाता है। फिर भी यहाँ पर अधःस्थितिगलनाके द्वारा गलनेवाले द्रव्यकी मुख्यता है। नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति ऐशान कल्पमें होती है। उसकी मुख्यतासे भी इसी प्रकार सन्निकर्ष प्राप्त होता है, इसलिए इसे स्त्रीवेदकी मुख्यतासे कहे गये सन्निकर्षके समान जाननेकी सूचना की है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ९१. पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवके चार संज्वलनकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो संख्यातगुणी हीन होती है। छह नोकषायोंकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी हीन होती है। क्रोधसंज्वलनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवके पुरुषवेद और संज्वलन प्रकृतियोंके सिवा शेष प्रकृतियोंका नियमसे असत्त्व होता है। तीन संज्वलनोंकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो संख्यातगुणी हीन होती है। पुरुषवेदकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी हीन होती है। मान संज्वलनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवके संज्वलन प्रकृतियोंके सिवा पूर्वकी शेष सब प्रकृतियोंका नियमसे असत्त्व होता है। मायासंज्वलन और लोभसंज्वलनकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो संख्यातगुणी हीन होती है। क्रोधसंज्वलनकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी हीन होती है। मायासंज्वलनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवके लोभसंज्वलनकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो संख्यातगुणी हीन होती है। मानसंज्वलनकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी हीन होती है। लोभसंज्वलनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवके मायासंज्वलनकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति

---

१ आ॰प्रतौ 'असंखेज्जगुणहीणा' इति पाठः। २ आ॰ प्रतौ 'असंखेज्जगुणहीणा' इति पाठः।

§ ६६. आदेसेण णेरइएसु मिच्छ० उक्क० पदेसविहत्तिओ सोलसक०-छण्णोक० णियमा विहत्तिओ। तं तु वेट्ठाणपदिदा अणंतभागहीणा असंखे०भागहीणा वा। तिण्हं वेदाणं णियमा अणुक्क० असंखे०भागहीणा। सम्मत्त०-सम्मामिच्छत्ताण-मविहत्तिओ। एवं सोलसक०-छण्णोकसायाणं। सम्म० उक्क० पदेसविहत्तिओ बारसक०-णवणोक० णियमा अणुक्क० असंखेज्जभागहीणा। सम्मामि० उक्क० पदे०विहत्ति० सम्म० णियमा अणुक्क० असंखेज्जगुणहीणा। मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० णियमा अणुक्क० असंखे०भागहीणा। इत्थिवेद० उक्क० पदे०वि० मिच्छ०-सोलसक०-अट्ठणोक० णियमा अणुक्क० असंखे०भागहीणा। एवं णवुंसयवेदस्स। पुरिसवेदस्स एवं चेव। णवरि सम्म०-सम्मामि० असंखे०गुणहीणा, उक्कड्डणाए विणा देवेसु

होती है जो असंख्यातगुणी हीन होती है।

विशेषार्थ—यहाँ पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके समय छह नोकषाय और चार संज्वलनका, क्रोध संज्वलनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके समय पुरुषवेद और मान आदि तीन संज्वलन का, मान सज्वलनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके समय शेष तीन संज्वलनोंका, मायासंज्वलनकी उत्कृष्ट-प्रदेशविभक्तिके समय मान संज्वलन और लोभसज्वलनका तथा लोभसंज्वलनकी उत्कृष्ट प्रदेश-विभक्तिके समय मायासज्वलनका भी सत्त्व रहता है, इसलिए जहाँ जिन प्रकृतियोंका सन्निकर्ष सम्भव है वह कहा है। मात्र विवक्षितकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति जिन प्रकृतियोंके अन्तिम स्थिति-काण्डककी अन्तिम फालिका पतन होने पर होती है उन प्रकृतियोंकी प्रदेशविभक्ति असंख्यात-गुणी हीन पाई जाती है और जिन प्रकृतियोंके स्थितिकाण्डकोंका घात होना शेष रहता है उनकी प्रदेशविभक्ति संख्यातगुणी हीन पाई जाती है।

§ ६६. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला जीव सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी नियमसे विभक्तिवाला होता है। किन्तु वह इनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति-वाला भी होता है और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला भी होता है। यदि अनुत्कृष्ट प्रदेश-विभक्तिवाला होता है तो उसके इनकी दो स्थान पतित अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है—या तो अनन्तभाग हीन अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है या असख्यातभाग हीन अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। तीन वेदोंकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्तातभाग हीन होती है। यह सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सत्त्व से रहित होता है। इसी प्रकार सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जाना चाहिये। सम्य-क्त्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवके बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातभाग हीन होती है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति-वाले जीवके सम्यक्त्वकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी हीन होती है। मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातभागहीन होती है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व, सोलह कषाय और आठ नोकषायोंकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यात भाग हीन होती है। इसी प्रकार नपुसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असख्यातगुणी हीन अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है, क्यों कि उत्कर्षणके विना

गलिदासंखेज्जगुणहाणिभावो। गुणिदकम्मंसियपच्छायदमिच्छत्तदव्वे जहाकमेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु संकंते असंखे०भागहीणं किण्ण जायदे? ण, सम्मादिट्ठिणोकड्डणाए पुव्वकयपदेसिमगोवुच्छासु असंखे०गुणहाणिमेत्तासु गलिदासु असंखे० गुणहाणिदंसणादो। एवं पढमाए। विदियादि जाव सत्तमि त्ति एवं चेव। णवरि सम्म० उक्क० पदे०विहत्तिओ मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० णियमा अणुक्क० असंखे०भागहीणा। सम्मामि० णियमा उक्क०। एवं सम्मामि०।

§ ९७ तिरिक्ख०-पंचिंदियतिरिक्ख-पंचिं०तिरि०पज्ज० देवगदीए देव० सोहम्मादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति णेरइयभंगो। पंचिंदियतिरिक्खजोणिणीसु विदियपुढविभंगो। एवं भवण०-वाण०-जोदिसियाणं। पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्ताणं पंचिंदियतिरिक्खपज्जत्तभंगो। णवरि सम्म० उक्क० पदेसविहत्ति० सम्मामि० तं तु वेट्ठाणपदिदं अणंतभागहीणं असंखे०भागहीणं। सेसपदा णियमा अणुक्क० असंखे०-

---

देनेमें असंख्यात गुणहानियाँ गल जाती हैं।

शंका—गुणितकर्मांशिक जीवके द्वारा मिथ्यात्वके द्रव्यका उत्कर्षण करके और उसे उसी समयमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रान्त कर देने पर इनका द्रव्य असंख्यातभाग हीन क्यों नहीं होता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि सम्यग्दृष्टिके अपकर्षणके द्वारा अधस्तन गोपुच्छाओंके स्तूप हो जानेसे असंख्यात गुणहानियोंके गल जाने पर असंख्यातगुणहानि देखी जाती है।

इसी प्रकार पहली पृथिवीमें जानना चाहिये। दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातभाग हीन होती है। इसके सम्यग्मिथ्यात्वकी नियम से उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

विशेषार्थ—सामान्यसे नारकियोंमें और पहली पृथिवीमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव उत्पन्न होते हैं, इसलिए वहाँ सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके समय मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका सत्त्व नहीं होनेसे उनका सन्निकर्ष नहीं कहा। परन्तु द्वितीयादि पृथिवियोंमें कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि जीव नहीं उत्पन्न होते, इसलिए वहाँ सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट प्रदेश-विभक्तिके समय उनका सत्त्व स्वीकार किया है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ९७. तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्त, देवगतिमें सामान्य देव और सौधर्म कल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनियोंमें दूसरी पृथिवीके समान भङ्ग है। इसी प्रकार भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवके सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति भी होती है और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति भी होती है। यदि अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है तो वह दो स्थान पतित होती है—या तो अनन्तभाग

भागहीणा । एवं सम्मामि० । एवं मणुस्सअपज्ज० ।

§ ६८. मणुसतियम्मि ओघं । णवरि मणुस्सिणीसु पुरिसवेद० उक्क० पदेसविह० इत्थिवेद० णियमा अणुक्क० असंखे०गुणहीणा । अणुदिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति मिच्छ० उक्क० पदे०वि० सम्मामिच्छत्त-सोलसक०-छण्णोक० णियमा तं तु विट्ठाणपदिदा अणंतभागहीणा असंखे०भागहीणा वा । सम्मत्त० णियमा अणुक्क० असखे०भागहीणं । तिण्हं वेदाणं णियमा अणुक्क० असंखे०भागहीणा । एवं सोलसक०-छण्णोक०-सम्मामिच्छत्ताणं । सम्मत्त० उक्क० पदे०विहत्ति० वारसक०-णवणोक० णियमा अणुक्क० असंखे०भागहीणा । इत्थिवेद० उक्क० पदे०वि० मिच्छ०-सम्मामि०-सोलसक०-अट्ठणोक० णियमा अणुक्क० असंखे०भागहीणा । सम्म०

हीन होती है या असंख्यातभाग हीन होती है । शेष प्रकृतियोंकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातभाग हीन होती है । इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें इसी प्रकार अर्थात् पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—जो विशेषता सामान्य नारकियोंमे वतला आये हैं वही यहाँ तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्त, सामान्य देव और सौधर्म कल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें घटित हो जाती है, इस लिए इनमें सामान्य नारकियोंके समान जाननेकी सूचना की है । दूसरी पृथिवीके समान पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनी और भवनत्रिकमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव नहीं उत्पन्न होते, इसलिए इनमे दूसरी पृथिवीके समान भङ्ग वन जानेसे उसके समान जाननेकी सूचना की है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तक यह मार्गणा ऐसी है जिसमें मात्र मिथ्यादृष्टि जीव होते हैं इसलिए इसमे अन्य प्ररूपणा तो पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तकोंके समान वन जाने से उनके जाननेकी सूचना की है । किन्तु इसके सिवा जो विशेषता है उसका अलगसे निर्देश किया है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है यह स्पष्ट ही है ।

§ ६८. मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभवाले जीवके स्त्रीवेदकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी हीन होती है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवके सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी नियमसे उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति भी होती है और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति भी होती है । यदि अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है तो वह दो स्थान पतित होती है—या तो अनन्तभाग हीन होती है या असंख्यातभागहीन होती है । सम्यक्त्वकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुण हीन होती है । तीन वेदोंकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यतभागहीन होती है । इसी प्रकार सोलह कषाय, छह नोकषाय और सम्यग्मिथ्यात्वकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवके वारह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातभाग हीन होती है । स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कपाय और आठ नोकषायोंकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति

णियमा अणुक्क० असंखे०गुणहीणा । एवं णवुंस० । पुरिसवेदस्स देवोघं । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ९९. जहण्णए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छत्तस्स जहण्णपदेसविहत्तिओ सम्म०-सम्मामि० एक्कारसक०-तिण्णिवेद० णियमा अजहण्ण० असंखेज्जगुणब्भहिया । लोभसंज०-छण्णोक० णियमा अज०० असंखेज्जभाग-ब्भहिया । सम्मत्तगुणेण पंचिंदिएसु बेछावट्ठिसागरोवमाणि हिंडंतेण संचिदविसुद्धगुण-हाणिमेत्तपंचिंदियसमयपबद्धाणं सगसगजहण्णदव्वादो असंखेज्जगुणत्तं मोत्तूण णासंखेज्जभागब्भहियत्तं, एइंदियजहण्णसजोगादो वि पंचिंदियजहण्णजोगस्स असंख०-गुणत्तुवलंभादो । एत्थ परिहारो वुच्चदे—जदि वि बेछावट्ठिसागरोवमेसु लोभसंजलणं णिरंतरं बंधंतो वि समजहण्णदव्वादो विसेसाहियं चेव, अप्पदरकालम्मि झीणदव्वादो

होती है जो असंख्यातभागहीन होती है। सम्यक्त्वकी नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी हीन होती है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य देवोंके समान है। इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—ओघसे जो सन्निकर्ष कहा है वह मनुष्यत्रिकमें अविकल घटित हो जाता है, इसलिए इनमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्षमें कुछ विशेषता है, इसलिए उसका अलगसे निर्देश किया है। अनुदिश आदिमें सब देव सम्यग्दृष्टि होते हैं, इसलिए इनमें अन्य देवोंसे विशेषता होनेके कारण इनमें सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्षका अलगसे निर्देश किया है। विशेष स्पष्टीकरण स्वामित्वको देखकर कर लेना चाहिए। आगे अनाहारक मार्गणा तक इसी प्रकार अपनी अपनी विशेषताको जानकर सन्निकर्ष घटित कर लेना चाहिए।

इस प्रकार उत्कृष्ट सन्निकर्ष समाप्त हुआ।

§ ९९. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व ग्यारह कषाय और तीन वेदकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। लोभ-संज्वलन और छह नोकषायोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है।

शंका—सम्यक्त्व गुणके साथ जो पञ्चेन्द्रियोंमें दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण करता है उसके संचित हुए डेढ़ गुणहानिप्रमाण पञ्चेन्द्रियसम्बन्धी समयप्रबद्ध अपने अपने जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा असंख्यातगुणे होते हैं असंख्यातवें भाग अधिक नहीं, क्योंकि एकेन्द्रिय जीवके जघन्य योगसे भी पञ्चेन्द्रिय जीवका जघन्य योग असंख्यातगुणा पाया जाता है ?

समाधान—यहाँ उक्त शंकाका समाधान करते हैं—दो छयासठ सागर कालके भीतर लोभसंज्वलनका निरन्तर बन्ध करता हुआ भी अपने जघन्य द्रव्यसे वह विशेष अधिक ही होता

भुजगारकालम्मि संचिददव्वस्स असंखे०भागब्भहियत्तादो। केसिं पि सगजहण्ण-दव्वादो संखे०भागब्भहियं संखे०गुणमसंखेज्जगुणं वा किण्ण जायदे ? ण, असंखेज्ज-भागब्भहियं चेव, उक्कस्सजोगेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिदसम्मादिट्ठिम्मि वि अप्पदरकालादो भुजगारकालस्स णियमेण विसेसाहियस्सेवुवलंभादो। एदं कुदो उव-लब्भदे। 'णियमा असंखे०भागब्भहिया' त्ति उच्चारणाइरियवयणादो। कम्मपदेसाणं भुजगारप्पदरभावो किंणिबंधणो ? ण, सुक्कंधारपक्खचंदमंडलभुजगारप्पदराणं व साहावियत्तादो। जदि अप्पदरकालम्मि झीणमाणदव्वादो भुजगारकालम्मि संचिद-दव्वं विसेसाहियं चेव होदि तो खविदकम्मंसियदव्वादो गुणिदकम्मंसियदव्वेण वि विसेसाहिएणेव होदव्वं ? ण च एवं, वेदणाए चुण्णिसुत्तेण च सह विरोहादो त्ति सच्चं विसेसाहियं चेव, किं तु ण विरोहो, सवयणविरोहं मोत्तूण तंतंतरत्थेण विरोहाणब्भुवगमादो। वेयणा-चुण्णिसुत्ताणमुवएसो

है, क्योंकि अल्पतर कालके भीतर क्षयको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे भुजगार कालके भीतर सञ्चित हुआ द्रव्य असंख्यातवें भाग अधिक होता है।

शंका—किन्हीं जीवोंके अपने जघन्य द्रव्यसे सख्यातवें भाग अधिक, सख्यातगुणा अधिक या असख्यातगुणा अधिक क्यों नहीं होता है ?

समाधान—नहीं क्योंकि असंख्यातवें भाग अधिक ही होता है, क्योकि उत्कृष्ट योगके साथ दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण करनेवाले सम्यग्दृष्टि जीवके भी अल्पतर कालसे भुजगार काल नियमसे अधिक ही उपलब्ध होता है।

शंका—यह किस प्रमाणसे उपलब्ध होता है ?

समाधान—उच्चारणाचार्यके 'नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक है' इस वचनसे उप-लब्ध होता है।

शंका—कर्म प्रदेशोंका भुजगार और अल्पतर पद किस निमित्तसे होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि जिस प्रकार शुक्ल और कृष्णपक्षमें चन्द्रमण्डल स्वभावतः बढ़ता और घटता है उसी प्रकार यहाँ पर कर्मप्रदेशोंका भुजगार और अल्पतर पद स्वभावसे होता है।

शंका—यदि अल्पतर कालके भीतर नष्ट होनेवाले द्रव्यसे भुजगार कालके भीतर सञ्चित होनेवाला द्रव्य विशेष अधिक ही होता है तो क्षपितकर्मांशिकके द्रव्यसे गुणितकर्मांशिक जीवका द्रव्य भी विशेष अधिक होना चाहिए। परन्तु ऐसा नहीं है, क्यों कि ऐसा मानने पर वेदना और चूर्णिसूत्रके साथ विरोध आता है ?

समाधान—विशेष अधिक है यह सत्य है तो भी वेदना और चूर्णिसूत्रके साथ विरोध नहीं आता, क्योंकि स्ववचन विरोधको छोड़ कर दूसरे ग्रन्थमें प्रतिपादित अर्थके साथ आनेवाले विरोधको नहीं स्वीकार किया गया है।

वेदना और चूर्णिसूत्रोंका उपदेश है कि अल्पतर कालके भीतर क्षयको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे

मागब्भ०। सेसाणं पयडीणं णियमा अविहत्तिओ। एवं सत्तकसायाणं। कोधसंज० जह० पदेसविहत्तिओ माण-मायासंज० णियमा अज० असंखे०गुणब्भ०। लोभसंज० णियमा अज० असंखे०भागब्भ०। सेसाणं पयडीणं णियमा अविहत्तिओ। माणसंज० जहण्णपदेसविहत्तिओ मायासंज० णियमा अज० असंखे०गुणब्भ०। लोभसंज० णियमा अज० असंखे०भागब्भ०। मायासंज० जह० पदेसविहत्तिओ लोभसंज० णियमा अज० असंखेज्जगुणब्भहियं। सेसाणमविहत्तिओ। लोभसंज० जह० पदे० वि० एक्कारस०-तिण्णिवेद० णियमा अज० असंखे० गुणब्भ०। छण्णोक० णियमा अज० असंखे०भागब्भ०।

§ १०२. इत्थिवेद० जह० पदे० विहत्तिओ तिण्णिसंज० पुरिस० णियमा अज० असंखे०गुणब्भ०। लोभसंज०-छण्णोक० णियमा अज० असंखे०भागब्भहियं। एवं णवुंसयवेदस्स। पुरिसवेद० जह० पदेस० तिण्णिसंज० णियमा अज० असंखे०गुणब्भ०। लोभसंज० णियमा अज० असंखे०भागब्भ०। हस्स० जह० पदे० विहत्तिओ तिण्णिसंज० पुरिसवेद० णियमा अज० असंखे०गुणब्भहि०। लोभसंज०

अविभक्तिवाला होता है। इसी प्रकार सात कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। क्रोधसंज्वलनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके मानसंज्वलन और मायासंज्वलनकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। लोभसंज्वलनकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। वह शेष प्रकृतियोंका नियमसे अविभक्तिवाला होता है। मानसंज्वलनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके मायासंज्वलनकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। लोभसंज्वलनकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। मायासंज्वलनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके लोभसंज्वलनकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। वह शेष प्रकृतियोंका अविभक्तिवाला होता है। लोभसंज्वलनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके ग्यारह कषाय और तीन वेदोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। छह नोकषायोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है।

§ १०२. स्त्रीवेदकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके तीन संज्वलन और पुरुषवेदकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। लोभ संज्वलन और छह नोकषायोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। पुरुषवेदकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके तीन संज्वलनोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। लोभसंज्वलनकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। हास्यकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके तीन संज्वलन और पुरुषवेदकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है।

१ आ० प्रतौ 'अज० असंखे०गुणब्भहियं' इति पाठः।

णियमा अजह० असंखे०भाग०भ० । पंचणोक० णियमा तं तु वेट्ठाणपदिदा अणंत-भाग०भ० असंखे०भाग०भहि० । एवं पंचणोकसायाणं ।

§ १०३. आदेसेण णेरइएसु मिच्छ० जह० पदेसविहत्तिओ सम्म०सम्मामि० णियमा अज० असंखे०गुण०भहिया । बारसक०णवणोक० णियमा अज० असंखे०-भाग०भहिया । इत्थि-णवुंसयवेदाणं होदु णाम असंखे०भाग०भहियत्त, मिच्छत्तं गंतूण पडिवक्खबंधगद्धाए चरिमसमयम्मि[1] जहण्णसंतकम्मत्तुवलंभादो । ण सेसकम्माणं, तेत्तीससागरोवमेसु पंचिंदियजोगेण एइंदियजोगं पेक्खिदूण असंखे०गुणेण संचिदत्तादो त्ति ? ण एस दोसो, खविदकम्मंसियजहण्णदव्वं पेक्खिदूण गुणिदकम्मंसियभुजगार-कालम्मि सचिददव्वस्स असंखे०गुणहीणत्तादो । एदं कुदो णव्वदे ? एदम्हादो चेव सण्णियासादो । एवं संते जहण्णदव्वादो उक्कस्सदव्वमसंखे०गुणं ति भणिदवेयणा चुण्णिसुत्तेहि विरोहो होदि त्ति ण पच्चवट्ठेयं, भिण्णोवएसत्तादो । सम्म० जह०

लोभसञ्ज्वलनकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। पाँच नोकषायोंकी नियमसे जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है या अजघन्य प्रदेश-विभक्ति होती है। यदि अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है तो वह दो स्थान पतित होती है—या तो अनन्तवें भाग अधिक होती है या असंख्यातवें भाग अधिक होती है। इसी प्रकार पाँच नोकषायों-की मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ १०३ आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है।

शंका—स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी अजघन्य प्रदेशविभक्ति असंख्यातवें भाग अधिक होओ, क्योंकि मिथ्यात्वमें जाकर प्रतिपक्ष प्रकृतिके बन्धक कालके अन्तिम समयमें जघन्य सत्कर्म उपलब्ध होता है। परन्तु शेष कर्मोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्ति असंख्यातवें भाग अधिक नहीं हो सकती, क्योंकि तेतीस सागरकी आयुवाले जीवोंमें एकेन्द्रिय जीवके योगको देखते हुए असंख्यातगुणे पञ्चेन्द्रिय जीवके योगद्वारा उनका द्रव्य सञ्चित होता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि क्षपितकर्मांशिक जीवके जघन्य द्रव्यको देखते हुए गुणितकर्मांशिक जीवके भुजगार कालके भीतर सञ्चित हुआ द्रव्य असंख्यातगुणा हीन होता है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है।

समाधान—इसी सन्निकर्षसे जाना जाता है।

शंका—ऐसा होने पर जघन्य द्रव्यसे उत्कृष्ट द्रव्य असंख्यातगुणा होता है ऐसा कथन करनेवाले वेदना चूर्णिसूत्रोंके साथ विरोध आता है ?

समाधान—ऐसा निश्चय नहीं करना चाहिए, क्योंकि वह भिन्न उपदेश है।

---

१ ता० प्रतौ 'पडिवक्खचरिमसमयम्मि' इति पाठः ।

अण्णदरकालम्मि णिज्जमाणदव्वादो भुजगारकालम्मि गुणिदकम्मंसियविसयम्मि संचिज्जमाणदव्वं कत्थ वि असंखेज्जभागब्भहियं, कत्थ वि संखेज्जभागब्भहियं, कत्थ वि संखेज्जगुणब्भहियं, कत्थ वि असंखेज्जगुणमत्थि। तेण तत्थ गुणिदकम्मंसियकालो कम्मट्ठिदिमेत्तो। खविदकम्मंसियम्मि पुण भुजगारकालम्मि संचिददव्वादो अण्णदर कालम्मि झीणदव्वमसंखे०भागब्भहियं, कत्थ वि संखेज्जभागब्भहियं संखेज्जगुणब्भहियमसंखेज्जगुणब्भहियं च। एदं कुदो णव्वदे? कम्मट्ठिदिमेत्तखविदकम्मंसियकालपरूवणादो। उच्चारणाए पुण गुणिदकम्मंसियम्मि अण्णदरकालम्मि झीणदव्वादो भुजगारकालम्मि संचिददव्वं विसेसाहियं चेव। एदं कुदो णव्वदे? खमसंजदण्णस्स जहण्णदव्वादो वेछावट्ठिकालब्भंतरे पंचिंदियजोगेण संचिदं पि खमसंजदण्णदव्वं विसेसाहियं चेवे त्ति वयणादो। जदि एवं तो उच्चारणाए कम्मट्ठिदिमेत्तो गुणिदकम्मंसियकालो किमट्ठं परूविदो? भुजगारकालम्मि समअसंखेज्जदिभाग-मेत्तदव्वसंगहट्ठं।

§ १० सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णपदेसविहत्तिओ मिच्छ-पण्णारसक०-तिण्णि-

गुणितकर्मांशिकके विषयरूप भुजगार कालके भीतर संचित हुआ द्रव्य कहीं पर असंख्यातवें भाग अधिक है, कहीं पर संख्यातवें भाग अधिक है, कहीं पर संख्यातगुणा अधिक है और कहीं पर असंख्यातगुणा अधिक है। इस लिए वहाँ गुणितकर्मांशिकका काल कर्मस्थितिप्रमाण है। परन्तु क्षपितकर्मांशिकके भुजगार कालके भीतर संचित हुए द्रव्यसे अन्यतर कालके भीतर क्षयको प्राप्त होनेवाला द्रव्य कहीं पर असंख्यातवें भाग अधिक है, कहीं पर संख्यातवें भाग अधिक है, कहीं पर संख्यातगुणा अधिक है और कहीं पर असंख्यातगुणा अधिक है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—क्षपितकर्मांशिकका काल कर्मस्थितिप्रमाण कहा है। उससे जाना जाता है।

परन्तु उच्चारणाके अनुसार गुणितकर्मांशिकसम्बन्धी अन्यतरकालके भीतर क्षयको प्राप्त हुए द्रव्यसे भुजगारकालके भीतर संचित हुआ द्रव्य विशेष अधिक ही है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—क्षेमसंयतके जघन्य द्रव्यसे दो छ्यासठ सागर कालके भीतर पञ्चेन्द्रिय जीवके योग द्वारा संचित हुआ भी क्षेमसंयतका द्रव्य विशेष अधिक ही है इस वचनसे जाना जाता है।

शंका—यदि ऐसा है तो उच्चारणामें गुणितकर्मांशिकका काल कर्मस्थितिप्रमाण किसलिए कहा है?

समाधान—भुजगार कालके भीतर अपना असंख्यातवाँ भाग अधिक द्रव्यका संग्रह करनेके लिए कहा है।

§ १ सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व, पन्द्रह कषाय और

वेद० णियमा अज० असंखे०गुण०भहिया। लोभसंज०-छण्णोक० णियमा अज० असंखे०भाग०भहिया। सम्मत्त० णियमा अविहत्तिओ। सम्मत्तस्स जहण्णपदेसविहत्तिओ मिच्छ०-सम्मामि०-पण्णारसक०-तिण्णिवेदाणं णियमा अज० असंखे०-गुण०भहिया। लोभसंज०-छण्णोक० णियमा अज० असंखे०भाग०भहि०। कारणं पुव्वं परूविदं ति णेह परूविज्जदे।

§ १०१. अणंताणु०कोध० जहण्णपदे० माण-माया-लोभाणं णियमा त तु विट्ठाणपदिदा अणंतभाग०भहि० असंखे०भाग०भहिया वा। मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-एक्कारसक०-तिण्णिवेदाणं णियमा अज० असंखे०भाग०भहिया। लोभसंज०-छण्णोक० णियमा अज० असंखे०भाग०भहिया। एवं माण-माया-लोभाणं। अपच्चक्खाणकोध० जह० पदेसविहत्तिओ सत्तकसायाणं णियमा विहत्तिओ। तं तु वेट्ठाणपदिदा अणंतभाग०भहिया असंखे०भाग०भहिया। तिण्णिसंजल०-तिण्णिवेद० णियमा अज० असंखे०गुण०भहि०। लोभसंज०-छण्णोक० णियमा अज० असंखे०-

तीन वेदोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। लोभसंज्वलन और छह नोकषायोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। तथा वह सम्यक्त्वका नियमसे अविभक्तिवाला होता है। सम्यक्त्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, पन्द्रह कषाय और तीन वेदोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। लोभसंज्वलन और छह नोकषायोकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। कारण पहले कह आये हैं, इसलिए यहाँ उसका कथन नहीं करते।

§ १०१. अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके मान, माया और लोभकी नियमसे जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है और अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है। यदि अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है तो वह दो स्थान पतित होती है—या तो अनन्तवें भाग अधिक होती है या असंख्यातवें भाग अधिक होती है। मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, ग्यारह कषाय और तीन वेदोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। लोभसंज्वलन और छह नोकषायोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। इसी प्रकार मान, माया और लोभकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके सात कषायोंकी नियमसे जघन्य प्रदेशविभक्ति या अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है। यदि अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है तो वह दो स्थान पतित होती है—या तो अनन्तवें भाग अधिक होती है या असंख्यातवें भाग अधिक होती है। तीन संज्वलन और तीन वेदोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। लोभसंज्वलन और छह नोकषायोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। वह शेष प्रकृतियोंका नियमसे

१ आ०प्रतौ 'असखे०भाग०भहिया वा। एवं' इति पाठः। २ आ०प्रतौ 'छण्णोक० अज०' इति पाठः।

भागब्भ०। सेसाणं पयडीणं णियमा अविहत्तिओ। एवं सत्तकसायाणं। कोधसंज० जह० पदेसविहत्तिओ माण-मायासंज० णियमा अज० असंखे०गुणब्भ०। लोभसंज० णियमा अज० असंखे०भागब्भ०[1]। सेसाणं पयडीणं णियमा अविहत्तिओ। माणसंज० जहण्णपदेसविहत्तिओ मायासंज० णियमा अज० असंखे०गुणब्भ०। लोभसंज० णियमा अज० असंखे०भागब्भ०। मायासंज० जह० पदेसविहत्तिओ लोभसंज० णियमा अज० असंखेज्जगुणब्भहियं। सेसाणमविहत्तिओ। लोभसंज० जह० पदे० वि० एक्कारस०-तिण्णिवेद० णियमा अज० असंखे०गुणब्भ०। छण्णोक० णियमा अज० असंखे०भागब्भ०।

§ १०२ इत्थिवेद० जह० पदे०विहत्तिओ तिण्णिसंज० पुरिस० णियमा अज० असंखे०गुणब्भ०। लोभसंज०-छण्णोक० णियमा अज० असंखे०भागब्भहियं। एवं णवुंसयवेदस्स। पुरिसवेद० जह० पदेस० तिण्णिसंज० णियमा अज० असंखे०गुणब्भ०। लोभसंज० णियमा अज० असंखे०भागब्भ०। हस्स० जह० पदे० विहत्तिओ तिण्णिसंज० पुरिसवेद० णियमा अज० असंखे०गुणब्भहि०। लोभसंज०

अविभक्तिवाला होता है। इसी प्रकार सात कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। क्रोधसंज्वलनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके मानसंज्वलन और मायासंज्वलनकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। लोभसंज्वलनकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। वह शेष प्रकृतियोंका नियमसे अविभक्तिवाला होता है। मानसंज्वलनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके माया संज्वलनकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। लोभसंज्वलनकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। मायासंज्वलनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके लोभसंज्वलनकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। वह शेष प्रकृतियोंका अविभक्तिवाला होता है। लोभसंज्वलनकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके ग्यारह कषाय और तीन वेदोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। छह नोकषायोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है।

§ १०२ स्त्रीवेदकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके तीन संज्वलन और पुरुषवेदकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। लोभ संज्वलन और छह नोकषायोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। पुरुषवेदकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके तीन संज्वलनोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। लोभसंज्वलनकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। हास्यकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके तीन संज्वलन और पुरुषवेदकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है।

---

१ आ०प्रतौ अज० असंखे०गुणब्भहियं इति पाठः।

णियमा अजह० असंखे०भाग०भ० । पंचणोक० णियमा तं तु वेट्ठाणपदिदा अणंत-भाग०भ० असंखे०भाग०भहि० । एवं पंचणोकसायाणं ।

§ १०३. आदेसेण णेरइएसु मिच्छ० जह० पदेसविहत्तिओ सम्म०सम्मामि० णियमा अज० असंखे०गुण०भहिया । बारसक०णवणोक० णियमा अज० असंखे०-भाग०भहिया । इत्थि-णवुंसयवेदाणं होदु णाम असंखे०भाग०भहियत्त, मिच्छत्तं गंतूण पडिवक्खबंधगद्धाए चरिमसमयम्मि[1] जहण्णसंतकम्मत्तुवलंभादो । ण सेसकम्माणं, तेत्तीससागरोवमेसु पंचिंदियजोगेण एइंदियजोगं पेक्खिदूण असंखे०गुणेण संचिदत्तादो त्ति ? ण एस दोसो, खविदकम्मंसियजहण्णदव्वं पेक्खिदूण गुणिदकम्मंसियभुजगार-कालम्मि संचिददव्वस्स असंखे०गुणहीणत्तादो । एदं कुदो णव्वदे ? एदम्हादो चेव सण्णियासादो । एवं संते जहण्णदव्वादो उक्कस्सदव्वमसंखे०गुणं ति भणिदवेयणा चुण्णिसुत्तेहि विरोहो होदि त्ति ण पच्चवट्ठेयं, भिण्णोवएसत्तादो । सम्म० जह०

लोभसज्वलनकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। पाँच नोकषायोंकी नियमसे जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है या अजघन्य प्रदेश-विभक्ति होती है। यदि अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है तो वह दो स्थान पतित होती है—या तो अनन्तवें भाग अधिक होती है या असंख्यातवें भाग अधिक होती है। इसी प्रकार पाँच नोकषायों-की मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ १०३. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है।

शंका—स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी अजघन्य प्रदेशविभक्ति असंख्यातवें भाग अधिक होओ, क्योंकि मिथ्यात्वमें जाकर प्रतिपक्ष प्रकृतिके बन्धक कालके अन्तिम समयमें जघन्य सत्कर्म उपलब्ध होता है। परन्तु शेष कर्मोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्ति असंख्यातवें भाग अधिक नहीं हो सकती, क्योंकि तेतीस सागरकी आयुवाले जीवोंमें एकेन्द्रिय जीवके योगको देखते हुए असंख्यातगुणे पञ्चेन्द्रिय जीवके योगद्वारा उनका द्रव्य सञ्चित होता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि क्षपितकर्मांशिक जीवके जघन्य द्रव्यको देखते हुए गुणितकर्मांशिक जीवके भुजगार कालके भीतर सञ्चित हुआ द्रव्य असंख्यातगुणा हीन होता है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है।

समाधान—इसी सन्निकर्षसे जाना जाता है।

शंका—ऐसा होने पर जघन्य द्रव्यसे उत्कृष्ट द्रव्य असंख्यातगुणा होता है ऐसा कथन करनेवाले वेदना चूर्णिसूत्रोंके साथ विरोध आता है ?

समाधान—ऐसा निश्चय नहीं करना चाहिए, क्योंकि वह भिन्न उपदेश है।

---

1 ता० प्रतौ 'पडिवक्खचरिमसमयम्मि' इति पाठः ।

पदेसविहत्तिओ मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० णियमा अज० असंखे०भागब्भहि०। सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क० णियमा अज० असंखे०गुणब्भ०। सम्मामि० जह० पदेसविहत्तिओ मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० णियमा अज० असंखे०भागब्भ०। अणंताणु०चउक्क० णियमा० अज० असंखेज्जगुणब्भहिया।

§ १०४ अणंताणु०कोध० जह० पदेसविहत्तिओ मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० णियमा अज० असंखेज्जभागब्भहिया। सम्म०-सम्मामि० णियमा अज० असंखे० गुणब्भ०। माण-माया-लोभाणं णियमा तं तु विट्ठाणपदिदा अणंतभागब्भहिया असंखे०भागब्भ० वा। एवं माण-माया-लोभाणं। अपच्चक्खाणकोध० जह० पदेसविहत्तिओ मिच्छत्त-सत्तणोक० णियमा अज० असंखे०भागब्भ०। सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क० णियमा अज० असंखे०गुणब्भ०। एक्कारसक०-भय-दुगुंछ० णियमा तं तु विट्ठाणपदिदा—अणंतभागब्भहिया असंखे०भागब्भहिया वा। एवमेक्कारसक०-भय-दुगुंछाणं।

सम्यक्त्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है।

§ १०४ अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। अनन्तानुबन्धी मान माया और लोभकी नियमसे जघन्य प्रदेशविभक्ति भी होती है और अजघन्य प्रदेशविभक्ति भी होती है। यदि अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है तो वह दो स्थान पतित होती है—या तो अनन्तवें भाग अधिक होती है या असंख्यातवें भाग अधिक होती है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी मान माया और लोभकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व और सात नोकषायोंकी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातवें भाग अधिक होती है। सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी नियमसे अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है जो असंख्यातगुणी अधिक होती है। ग्यारह कषाय, भय और जुगुप्साकी नियमसे जघन्य प्रदेशविभक्ति भी होती है और अजघन्य प्रदेशविभक्ति भी होती है। यदि अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है तो वह दो स्थान पतित होती है—या तो अनन्तवें भाग अधिक होती है या असंख्यातवें भाग अधिक होती है। इसी प्रकार ग्यारह कषाय, भय और जुगुप्साकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।